वेदान्त प्रवाह
वर्ष 15 अंक 86
सम्वत् 2074 अक्टूबर 2017
देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वंत्वमीश्वरी देवि चराचरस्य॥
शरणागत की पीड़ा दूर करने वाली देवि! हम पर प्रसन्न हो।
सम्पूर्ण जगत की माता! प्रसन्न हो। विश्वेश्वरि! विश्व की रक्षा करो।
देवी! तुम्हीं चराचर जगत की अधीश्वरी हो।

श्री राम मन्दिर, काश्मीरीगंज, वाराणसी

वेदान्त प्रवाह

वर्ष 15 अंक 86 सम्वत् 2074 अक्टूबर 2017

प्रातः स्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं
सिन्दूरपूरपरिशोभितगण्युग्मम् ।
उद्दण्डविघ्नपरिखण्डनन्यण्डदण्ड-
माखण्डनादिसुरनायकवृन्दवन्धम्।।

अनाथों के बन्धु, सिन्दूर से शोभायमान दोनों गण्डस्थलावाले, प्रबलविघ्न का नाश करने में समर्थ एवं इन्द्रादि देवों से नमस्कृत श्रीगणेश का मैं स्मरण करता हूँ।

वेदान्त प्रवाह

आर.एन.आई. UPHIN/2002/109423

वर्ष 15 अंक 86
सम्वत् 2074
अक्टूबर 2017

प्रधान सम्पादक :
जगदगुरु अनन्तानन्द द्वाराचार्य स्वामी
डॉ. रामकमल दास वेदान्ती जी महाराज

कार्यकारी सम्पादक :
डॉ. हंस नारायण राही
पं. रामभरत शास्त्री

कार्यालय व्यवस्थापक :
श्री महेन्द्र नारायण सिंह

कम्प्यूटर ग्राफिक्स :
वीरेन्द्र जायसवाल

सदस्यता शुल्क :
वार्षिक : 150 रु0
पंचवार्षिक : 700 रु0
बीस वर्षीय : 2500 रु0

सदस्यता शुल्क :
वार्षिक : 35 डालर (35 US$)
पंच वार्षिक : 175 डालर (175 US$)
बीस वर्षीय : 700 डालर (700 US$)

अनुक्रमणिका

कार्यालय :
वेदान्त प्रवाह (मासिक)
श्री रामानंद विश्वहितकारिणी परिषद्
श्री राम मंदिर, बी.24/19, काश्मीरीगंज,
खोजवाँ गुरुधाम कालोनी, वाराणसी - 221010
दूरभाष : 8795750990, 9839266546
: प्रकाशक एवं मुद्रक :
स्वामी डॉ. रामकमल दास वेदान्ती जी महाराज
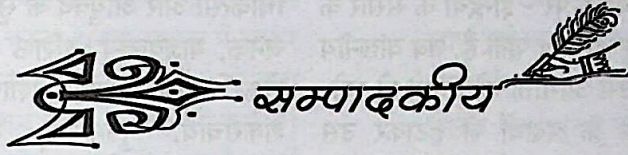
भक्तिमार्ग से भगवत्प्राप्ति

भारतीय दर्शन में मुक्ति (दुखनिवृत्ति एवं परमशान्ति) की प्राप्ति के लिए अनेक मार्ग बतलाए गये हैं, जैसे - 'ज्ञानयोग' का अर्थ है - तत्व ज्ञान के द्वारा अर्थात् आत्मा, परमात्मा एवं जगत् के वास्तविक स्वरूप के ज्ञान द्वारा मुक्ति की प्राप्ति।

'कर्मयोग' के अन्तर्गत मुख्यतः वेदों द्वारा बताए गए यज्ञ-हवन आदि कर्मकाण्डों के द्वारा अभीष्ट-प्राप्ति की सम्भावना बताई गयी है। भारतीय मीमांसा दर्शन कर्मकाण्डों का समर्थन करता है। विश्लेषण करने पर हम देखते है कि कर्म का क्षेत्र विस्तृत है तथा कर्म के साथ फल अनिवार्य है। फल की प्राप्ति से अहं की पुष्टि होती है, इसलिए कुछ दर्शनों में कर्म को अविद्यात्मक भी बताया गया है। ज्ञानमार्ग सर्वसाधारण हेतु सुलभ नहीं है। क्योंकि ज्ञान के क्षेत्र के अनेक पहलू हैं। सामान्य व्यक्ति इन सारे पहलुओं को सुलझाने की क्षमता नहीं रखता, इसलिए ज्ञानमार्ग केवल कुछ विशिष्ट लोगों के लिए ही उपयुक्त है।

यदि हम उपरोक्त दृष्टिकोणों से हटकर देखें, तो यह स्पष्ट है कि साधारण व्यक्ति हेतु सबसे सहज 'भक्ति मार्ग' ही है, क्योंकि इसके लिए ज्ञान के दुरूह मार्ग और कर्म के विस्तृत मार्ग में उलझने की आवश्यकता नहीं है, वरन् असीम सत्ता के प्रति समर्पण कर सारे जंजालों से मुक्त हो जाना है। भक्तिमार्ग की विशिष्टता यह है कि वह हमारे महान् दिव्य लक्ष्य की प्राप्ति का सबसे सहज एवं स्वाभाविक मार्ग है।

श्रद्धावान एवं भगवत्परायण, भगवतशरणागत व्यक्ति भक्तिमार्ग का योग्य पथिक होता है। भक्तियोग में भगवत् समर्पण की प्रधानता होती है, जिसमें भक्त का सारा अहंकार विगलित हो जाता है। भक्ति में अनन्त निष्ठा के साथ भगवत् सेवा की जाती है। भज् धातु से निष्पन्न होने के कारण 'भक्ति' का अर्थ है 'सेवा'।

''सर्वोपाधिविनिर्मुक्तं तत्परत्वेन निर्मलम्।
हृषीकेन हृषीकेशसेवनं भक्तिरुच्यते ॥''

अर्थात् सभी प्रकार की फल-कामना से रहित होकर, निष्काम भाव से सभी इन्द्रियों से पूर्ण तत्परता के साथ भगवान की सेवा करने का नाम भक्ति है। भक्त प्रह्लाद प्रार्थना करते है -

या प्रीतिरविवेकानां विषयेष्वनपायिनी।
त्वामनुस्मरतः सा ये हृदयापसर्यतु ॥

(विष्णुपुराण 1/20/19)

अर्थात् हे ईश्वर! जैसी अज्ञानियों की इन्द्रिय-भोग के नाशवान पदार्थों पर प्रबल आसक्ति होती है, वैसी ही मेरी आप में भक्ति हो और आपका स्मरण मेरे हृदय से कभी दूर न हो।

मानव में विद्यमान प्रेम या अनुराग को योग-वासना या संसार की ओर से विमुख कर, ईश्वर की ओर उन्मुख करने और अनिर्वचनीय मधुर प्रेम का आस्वादन प्राप्त करने की साधना भक्ति योग है। स्वामी विवेकानन्द के शब्दों में - ''भक्ति किसी का संहार नहीं करती, वरन् हमें यह सिखाती है कि हमें जो-जो शक्तियाँ दी गई है, उनमें से कोई भी निरर्थक नहीं है, बल्कि उन्हीं में से होकर हमारी मुक्ति का स्वाभाविक मार्ग है। भक्ति न तो किसी वस्तु का निषेध करती है और न वह हमें प्रकृति के विरूद्ध ही चलाती है। भक्ति तो केवल हमारी प्रकृति को ऊँचा उठाती है और उसे शक्तिशाली प्रेरणा देती है। इन्द्रिय-विषयों पर हमारी स्वाभाविक प्रीति हुआ करती है, ऐसी प्रीति किये बिना हम रह ही नहीं सकते, क्योंकि ये विषय, ये पदार्थ हमें बिल्कुल सत्य प्रतीत होते हैं। साधारणतः हमें इनमें उच्चतर पदार्थों में कोई यर्थाथता ही नहीं दिखाई

देती, पर जब मनुष्य इन्द्रियों के परे - इन्द्रियों के संसार के उस पार किसी यथार्थ वस्तु को देख पाता है, तब वांछनीय यह है कि उस प्रीति को, उस आसक्ति को बनाये तो रखे, पर उसे सांसारिक विषय के पदार्थों से हटाकर उस इन्द्रियातीत तत्व को परमेश्वर में लगा दे। जब इन्द्रियों के योग्य पदार्थों का उत्कट प्रेम ईश्वर (भगवान) में लग जाता है, तब उसका नाम 'भक्तियोग' हो जाता है।''

वस्तुतः प्रेम तो मानव हृदय की नैसर्गिक तथा जन्मजात प्रवृत्ति या भाव है। जब वह भाव सांसारिक व्यक्ति या वस्तु के प्रति होता है, तो वह वासना के रूप में होता है तथा जीव के बन्धन एवं दुख का कारण बनता है। जब यही भाव ईश्वर के प्रति होता है, तो वह प्रेम 'भक्ति' कहलाता है। वह साधना, योग का रूप लेती है और जीव को समस्त दुख, शोक व भय से विमुक्त कर देती है।

प्रेम भाव के सागर में निमग्न भक्तयोगी सदा अपने प्रभु का दर्शन प्राप्त करता है, प्रेमी भक्त के रोम-रोम में ईश्वर समा जाता है। मन, वचन और कर्म की सभी अभिव्यक्ति बौद्धिक, भावात्मक एवं क्रियात्मक आदि में एकमात्र वह ईश्वर ही प्रस्फुटित होता है। अनन्यता की दशा, प्रेम की पराकाष्ठा को इंगित करती है। यह भक्तयोगी की सिद्धावस्था में ही सम्भव है। **'तदप्रितखिलाचारिता, तद् विस्मरणे परम व्याकुलता'** भक्त इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए सब प्रकार से प्रयत्नशील रहता है और उससे तनिक भी बाहर आना, जल से विलग हुई मछली की भाँति उसे विफल, विह्वल और अधीर बना देता है।

श्रीमद्भागवत् में इस दिव्य अलौकिक प्रेम-दशा का सुन्दर चित्रण किया गया है-

क्वचिद्रुहृदन्त्यच्युत चिल्ला क्वचित्
हसन्ति निन्दति वदन्त्यलौकिकः।
नृत्यन्ति गायन्त्युशीलयन्त्वजं
भवन्ति तृष्णीं परमेत्व निर्वृताः॥

हमारे भारत देश में अनेक भक्त सन्त एवं योगी हुए हैं जो उपरोक्त वर्णित दिव्यानुभूति को प्राप्त करने में सफल हुए हैं। भक्तयोगियों के अद्भुत चारित्रिक रहस्य को समझने के लिए हमें अतीत के इतिहास पर सर्वप्रथम ध्यान केन्द्रित करना होगा। हमारे भारत देश में ऋषि, कवि, दार्शनिक, साहित्य लेखक, वैज्ञानिक, ज्योतिषी, गणितज्ञ, चिकित्सा और आयुर्वेद के सृष्टिकर्ता रहे हैं। हमारे देश में जनक, याज्ञवल्क्य, वशिष्ठ आदि गृहस्थयोगियों ने जन्म लेकर समाज को सही दिशा दी है। बुद्धदेव, ऋषभदेव, शंकराचार्य, गुरुनानक, कबीरदास, रामानुजाचार्य, बल्लभाचार्य, चैतन्य महाप्रभु, रामकृष्ण परमहंस, विजयकृष्ण गोस्वामी, स्वामी विवेकानन्द आदि अनेक साधु समाज के परम मंगल हेतु अपनी सुख-शान्ति और समाधि तक अपना सम्पूर्ण जीवन लोक-कल्याण में समर्पित कर गये है।

आज भी कुछ लोग उन्हीं के पदचिन्हों पर चलने का प्रयास करते हुए देश को आध्यात्मिक ग्लानि और अनैतिकता से दूर करने के लिए साधना कर रहे हैं। वे अपने त्याग-भक्ति-सेवामय जीवन से धर्म-पिपासुओं के अन्धकारमय जीवन को प्रेम, पवित्रता और सत्यधर्म की ज्योति से प्रकाशित कर रहे हैं। कोई भूख-प्यास और व्याधि से पीड़ितों की सहायता के लिए लाखो रुपयों का संग्रह एवं व्यय कर रहे हैं। कोई शोकार्त को मानवता, अज्ञानी को ज्ञान, निराश को आशा की किरण देकर नित्य इस देश व समाज को दुर्दशा से मुक्त करने के लिए कठोर परिश्रम भी कर रहे हैं।

भारतीय सन्तों के महानता एवं आध्यात्मिक शौर्य का थोड़ा अंश प्राप्त कर यूरोप और अमेरिका आश्चर्यचकित है, जिनकी दो-चार बातों को प्रतिध्वनि इमर्सन, कार्लाइल आदि पाश्चात्य दार्शनिकों के द्वारा सुनकर लोग उनकी उपासना का प्रयास कर रह हैं। ऐसे प्राचीन महात्माओं की परम्परा मानव के जीवन में शान्ति और परम लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक है।

वस्तुतः भक्तियोग ज्ञान, प्रेम और कर्म इन तीनों की एक साथ उन्नति का परिणाम है। बंगाल के भक्त-सद्गुरु विजयकृष्ण गोस्वामी की दृष्टि में परमेश्वर रस स्वरूप है। जिस प्रकार रस पौधे के भीतर एक साथ उसके मूल, तना, शाखा-प्रशाखा और पत्तों में सर्वत्र समान रूप से संजीवनी-शक्ति का संचार करता है, उसी प्रकार मानवात्मा में परमात्मा का आविर्भाव होने पर उनकी सब भावनाएँ एक साथ परिवर्द्धित होती है। आंशिक उन्नति इसके विपरीत है। ईश्वर पूर्ण हैं। पूर्ण परमेश्वर के हृदय में अवतीर्ण होने पर भक्त में अपूर्णता नहीं रहती, वह पूर्ण हो जाता है।

वास्तव में मनुष्य कर्मशील प्राणी है वह कर्म करता ही है। केवल नौकरी करना अथवा समाज में रहकर गृहस्थ जीवन का पालन करना ही कर्म नहीं है। जो बाह्य कर्म न कर विषयों का चिन्तन करता है, वह भी कर्म है। जैसे कोई प्रवचन देता है, कोई पुस्तक लिखता है, कोई कृषि-कार्य करता है, कोई न्यायाधीश है, कोई स्वदेश की रक्षा के लिए युद्ध करता है, कोई निर्जन स्थान में केवल ध्यान-साधना करता है और दूसरों को अपने धर्म-जीवन से प्राप्त सत्य की शिक्षा देता है। ये सभी कार्य ईश्वर-समर्पण की भावना से भक्ति बन जाते हैं।

भक्त समाज के लिए कल्याणकारी होते हैं। क्योंकि यदि समाज के व्यक्ति सम्यक् दृष्टिसम्पन्न भक्त होंगे, तो सारे समाज का कल्याण स्वतः ही होगा। भक्त में समस्त सद्गुण विद्यमान रहते हैं, क्योंकि वह सदा सर्वसद्गुण सम्पन्न भगवान का चिन्तन-मनन-निदिध्यासन करता रहता है। एक सच्चा भक्त प्राणिमात्र में अपने इष्ट को देखकर उनसे प्रेम करता है। भक्त के व्यक्तित्व एवं चरित्र से प्रभावित होकर समाज के लोग उनके सानिध्य में भक्तिपथ पर अग्रसर होते हैं।

भक्तयोगियों के संयमित, ईश्वराश्रित पावन जीवन का प्रभाव उनके अनुयायियों पर पड़ता है, जिससे वे अपने जीवन में नैतिक कर्म और नैतिक मूल्यों को अपनाकर भगवद्भक्ति की ओर बढ़ते हैं। भक्तिमार्ग से समाज में आन्तरिक सुविचारों का गुणात्मक विकास होता है, एकाग्रता एवं आत्मविश्वास में सहजता से वृद्धि होती है।

आधुनिक युग में वैज्ञानिक-आविष्कारों, भौतिकवादी और भोगवादी प्रवृत्ति तथा प्रौद्योगिकी के विकास के फलस्वरूप विभिन्न समस्याएँ जैसे - तनाव, कुंठा, विषमताएं, हिंसा, द्वेष एवं स्वार्थपरता निरन्तर बढ़ रही है, ऐसी स्थिति में भक्तिमार्ग मानव में समता, एकता, प्रेम, बन्धुत्व एवं सद्भावना का विकास कर मानसिक शान्ति और आनन्द प्रदान करने में सक्षम है।

वस्तुत, कर्मयोग, ज्ञानयोग एवं राजयोग, इन तीनों के द्वारा शाश्वत आनन्द की दुर्लभ अनुभूति प्राप्त होती है, किन्तु विश्लेषण करने पर यह देखा जाता है कि कर्म, ज्ञान एवं राजयोग का मूल आधार भक्ति है।

गीता (11/54-55) में भक्ति की महत्ता का उल्लेख करते हुए भगवान श्री कृष्ण कहते हैं -

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं व परंतप ॥
मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः।
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव॥

अर्थ - हे अर्जुन! भक्त केवल अनन्य भक्ति द्वारा इस प्रकार मुझे स्वरूपतः प्राप्त कर सकते हैं, साक्षात् दर्शन कर सकते हैं एवं मुझमें प्रविष्ट हो सकते हैं। जो व्यक्ति मेरा ही कर्म समझकर सभी कर्मों को करता है, मैं ही जिसकी एकमात्र गति हूँ, ऐसा समझकर जो सब प्रकार से मेरी उपासना करता है, जो आसक्तिरहित होकर किसी भी प्राणी से शत्रुता नहीं करता है, वह मुझको ही प्राप्त करता है।

योगदर्शन में ईश्वर के प्रति सर्वस्व समर्पण को ईश्वरप्राणिधान कहा गया है। इससे धारणा-ध्यान-समाधि अर्थात् राजयोग की लक्ष्य की प्राप्ति सरलतापूर्वक सम्पन्न है। अद्वैत वेदान्त के आचार्य शंकर, जो ज्ञानयोगी है, वे भी मोक्षप्राप्ति के उपकरण के रूप में 'भक्ति' को स्वीकार करते हैं। शंकराचार्य ने अनेक ऐसे भावपूर्ण एवं रसमय स्तोत्रों की रचना की है, जो भक्ति भावना से परिपूर्ण है, जैसे - सौंदर्य-लहरी, आनन्द-लहरी आदि।

श्रीमद्भागवत (3/29/14) में कहा गया है -

स एव भक्तियोगाख्य आत्यन्तिक उदाहृतः।
येनातिव्रज्य त्रिगुणं मद्भावायोपपद्यते ॥

हजारों मनुष्यों में कोई मुझे प्राप्त करने का प्रयत्न करता है, उन यत्नशील योगियों में भी कोई ही पुरुष मरे परायण होकर मुझे यथार्थ रूप से जानता है।

सामान्य व्यक्ति के लिए उच्च सैद्धान्तिक विचारधारा की स्वयं खोज कर उसके अनुरूप आचरण करना सदा सम्भव नहीं हो पाता। इसीलिए भक्तयोगी महात्माओं ने जन-मानस पर जिस भक्ति भावधारा का प्रसार किया, उसकी उपेक्षा न करके उसके अन्तर्निहित सिद्धान्तों का जीवन में आचरण करना चाहिए।

संसार में विविध क्लेश और बाधाओं के बीच में भी, हम भक्तयोगियों की आध्यात्मिक अनुभूति और उपदेशों की सहायता से अल्पकाल में ही सांसारिक दुखों से मुक्त होकर आनन्दमय जीवन व्यतीत कर सकते है। यह भक्ति मार्ग का महान वैशिष्ट्य है।

श्रीराम और समाज

श्रीराम मानव जाति को एक दिशा देने वाले युग-प्रवर्तक, पक्के आत्मवादी जननायक थे और युग-युगान्तर से उनकी अक्षुण्ण कीर्ति विश्व में व्यापक हो रही है। इस पर किसी टिप्पणी की जगह नहीं है। भारतीय संस्कृति तक श्रद्धा में कोई कमी नहीं आती, इसलिए श्रीराम के प्रति अतीत से वर्तमान तक श्रद्धा में कोई कमी नहीं आयी। श्रीराम जैसा कोई अन्य व्यक्ति हुआ ही नहीं जिसकी तुलना की जाये। वे अकेले हुए हैं और अकेले रहेंगे।

तथापि कुछ लोगों का मानना है कि राम थे ही नहीं, अथवा जैसे वे बताये जाते हैं वैसे नहीं थे, उनके गुण अनार्यों की भाँति थे, आदि-आदि। राम के चरित्र पर आक्षेप करना प्रदूषित रक्त की आत्म-तड़पन भरी ध्वनि है और जहाँ स्वार्थ-प्रेरित दुर्बलता है वहाँ ऐसी ध्वनि-तरंगें स्वाभाविक हैं। हो इसको तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि वार्णिक समाज की अदूरदर्शी प्रमत्तता का यह परिणाम है, अन्यथा श्रीराम में दोष देखने वाला कोई हिन्दू न होता। एक आँख (मात्र दोष दृष्टि) से देखने वाला काणा (कौआ) होता है और दोनों आँखों (गुण-दोष) से देखने वाला पूर्ण दृष्टा। समीक्षात्मक दृष्टि से श्रीराम सद्गुण विशेष, उच्च आदर्श द्योतक महापुरुष थे, इसमें संदेश नहीं। अतः उनके गुणों को परखने वाला भी कोई गुणग्राही मानस मराल ही हो सकता है।

यह सच है कि समय के साथ आवश्यकताएँ बदलती रहती है। समाज परिवर्तन चाहता है और यही हुआ भी है। कभी हम सभ्य थे तो कभी निरा असभ्य, महान असम्य, कभी अराजक और कभी धर्मबंधन में जकड़े थे। यहाँ किसी धर्म के मानने का मतलब है कि जीवन का एक ऐसा कार्यक्रम मिले जिसमें मनुष्य का कल्याण हो। किन्तु जब उतने से कल्याण असंभव होने लगता है तब उसमें भी हेर-फेर कर दिया जाता है। इस तरह से इस धर्म प्रकरण में भी अनेक सामाजिक परिवर्तन हुए हैं। कभी गुण को अवगुण, कभी अवगुण को गुण मानने का सामाजिक प्रावधान है और ऐसे बदलाव भी समयानुसार हुए हैं जो अपने उस समय के लिए उपयोगी एवं आवश्यक थे।

कभी बहुपत्नीत्व प्रथा थी, कभी बहुपतित्व, कभी एक नारी प्रथा थी, कभी एक पति की। कभी मद्य-मांस भक्षण धर्मोचित था, कभी अनुचित एवं महान असभ्यता का परिचायक था। कभी वार्णिक समाज कड़ा था और उसके अनुसार चलना अत्यावश्यक था तो कभी यह ढीला-ढाला हुआ। कभी सुशासन तो कभी अराजकता और कभी समाजिक उत्थान तो कभी पतन। हर वर्तमान का सामाजिक चिन्तक अतीत को कभी अच्छा, तो कभी बुरा कहता है, लेकिन जो नया ढाँचा वह तैयार करता है उसमें गत रूढ़ियों के अंशों को ही मिलाकर उसका मौलिकीकरण करता हैं। अतः समाज की ऐसी ही सामाजिक प्रक्रियाएँ होती हैं। समय-समय पर साहित्यिक सर्जना होती रहती है, जिससे आज बदलते समय के लिए विभिन्न ग्रंथों में विभिन्न बातें मिलती हैं और यथोचित प्रमाण उपलब्ध हो जाते हैं। इसी से शैतान भी धर्मशास्त्र के हवाले देकर बात करने लगता है।

मूल में हिन्दु साधु संस्था एक जनसेवी साधु संस्था थी। विद्वान, ब्राह्मण और ऋषि आदि इसके साधु थे। उन्होंने समाज को बहुत कुछ दिया। वे तप करते थे। तप के मान है अपने और जगत के हित के लिए स्वेच्छा से विवेक पूर्व कष्ट सहन करना। ऋषि, साधुओं ने ईश्वर (समर्थ), एक अज्ञात शक्ति, जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में ऊर्जा

स्वरूप में अखण्ड विद्यमान है। सब प्राणियों का वही चेतन है। अपने युग को देखते हुए जिस मनुष्य में जन साधारण की अपेक्षा बहुत अधिक शक्ति विशेष जैसे गुण उतरे हो, वह उस चैतन्य शक्ति का विशेष केन्द्र या अवतार होता है। भारतीय सर्वोच्च पद मान्यता में उसी को भगवान माना जाता है। अतः ईश्वरीशक्ति अखण्ड है। हर प्राणी के शरीर में आत्म-स्वरूप में वही प्रतिबिम्बित होती है। इसलिए आस्थापूर्ण उन चैतन्य आत्माओं का आदर करना जन-जन के लिए आवश्यक है। किन्तु इस परमेश्वर शक्ति की शुद्ध साधना के लिए या इस शक्तिसाध्या के लिए पवित्र साधनों में सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह प्रथम आवश्यकताएँ हैं और इन्हीं साधनों से ही आपसी सौहार्दपूर्ण समाज का हित संभव है। सत्य, अहिंसा आदि के अंशानुपात पर समाज का शुभ-अशुभ स्वतः प्रकट होता रहता है।

पवित्र साधु संस्था में गड़बड़ी, वानप्रस्थ और सन्यास आश्रम से पैदा हुई। इस दोनों आश्रमों का निवृत्तिवादीपन तथा इनके आलस्य और अकर्त्तापन से समाज पर बोझ ढालने वाले लाखों भिखारी घूमने लगे, जिनकी न तो जनसेवा की जिम्मेदारी रही और न ही तप की। आश्चर्य है कि ऐसे लोगों के प्रति ही धर्मशास्त्रों के हवाले मिलने लगे और आज के समाज सुधारक उन पर आक्षेप करना ही अपना नया मत समझने लगे। जबकि श्रीकृष्ण बहुत पहले ही ऐसे साधु-सन्यासियों का विरोध करके कर्मयोग की मान्यता दे चुके हैं।

महाभारत नरसंहार के पश्चात् जनसंख्या वृद्धि की आवश्यकता थी। तब मद्य-मांस भक्षण, पशुवत योनिभ्रता और अश्लील मुद्राओं को धर्म से जोड़ दिया गया था। ऐसे पंथ सम्बन्धी धर्मशास्त्रों में भी पर्याप्त प्रक्षिप्तियाँ डाली गयी थीं - "नमांस भक्षणें दोषः मुद्रा मैथुनमेवच।"- और अतीत प्रथाएँ पलट दी गयी थीं परंतु उसमें भी कोई सामाजिक धर्म तथा भावनात्मक रहस्य छिपा था और रेखा चिन्हित वर्णता थी। जबकि आधुनिक विदेशी संस्कारों से मूर्च्छित अश्लील प्रिय भोग-धर्म चिन्तक एवं बहुसंख्यक भारतीय समाज के लिए - "एक तो पागल दूसर भूत पहेटा" की कहावत चरितार्थ होगी।

यथार्थतः आज के विश्व में बहुविकसित वैज्ञानिक भौतिक युग के अनुरूप अतीत और वर्तमान का सामञ्जस्य स्थापन और समाज एवं धर्म को युक्त संगत करने की आवश्यकता है। किन्तु अपने वर्तमान में मानव कल्याण के लिए कठिन समस्याओं से जूझने वाले राम, कृष्ण आदि महामानवों के सम्मान को सुरक्षित रखना भी अपनी भारतीयता का पहला कर्तव्य है। हजारों वर्षों से जिस विशाल साहित्य का निर्माण हुआ है और अपने हर वर्तमान के अनुभवों से भरा है एवं जिससे हमें अपने हिन्दुत्व का गर्व है, उसका अध्ययन ऐतिहासिक दृष्टि से भी और उपयोग में लाने की दृष्टि से भी उसका तत्वसार ग्रहण करना है। उससे हमारे चरित्र निर्माण में भारी मदद मिलेगी और यही हमारा सच्चा हिन्दू स्वरूप है।

अतः कथाओं में भले ही भिन्नता हो, किन्तु श्रीराम सद्गुण प्रधान थे। उनका चरित्र कसौटियों पर खरा उतरा है, इसमें सन्देह नहीं। वे आत्मवादी प्रधान थे, इसलिए उनको भोगवाद से नापा नहीं जा सकता। आज का मनमुखी बवंडर कुछ कहे, लेकिन विवेकशील सुधी वर्ग ने उनके चरित्र को आदर्श रूप में लिया है और लेता रहेगा। अहिंसा के उपासक गाँधी जी ने भी कहा था कि "यदि हिंसा और कायरता दोनों सामने आयेंगे तो हम कायरता को छोड़ हिंसा को अपनायेंगे।" श्रीराम के प्रति बालिवध, शम्बूक वध, अहिल्या उद्धार और सीता के त्याग में आपेक्ष तर्क एक प्रकार की कुदृष्टि होगी। अपने वर्तमान की कठिन परिस्थिति को वही समझ सकता है जो उस पर जूझ मरने वाला होता है, सर्वसाधारण का छिद्रान्वेषण का चिन्तन नहीं।

अतिथि जिसका खाता है, उसके पाप धुल जाते है।	- अर्थववेद
मनुष्य के कर्म ही उसके विचारों की सबसे अच्छी व्याख्या है।	- लोक
मनुष्य सुख और दुःख दोनों का सृष्टा स्वयमेव ही है।	- म. चरक
मनुष्य आत्मा से ज्ञान शक्ति प्राप्त करता है और ज्ञान से अमृत्व को।	- केनोपनिषद

उपवास का महत्व

आकाश का अर्थ खालीपन यानि स्पेस होता है। मानव जीवन सृजन में आकाश तत्व का महत्व सर्वोपरि है। तन तथा मन को भी आकाश तत्व की आवश्यकता होती है। तन को आकाश तत्व से आविष्ट करने के लिए उपवास करें। मन को मौन एवं ध्यान द्वारा आकाश तत्व से आविष्ट करें। उपवास प्राकृतिक चिकित्सा की प्रधान चिकित्सा पद्धति है। प्रायः 2 से 5 दिन का उपवास कराते ही हैं, अतिजीर्ण-शीर्ण बीमारियों में लम्बा उपवास कराकर शरीर को नया जीवन प्रदान किया जाता है। जलोपवास, नीबू पानी शहद पर आंशिक उपवास, फलोपवास, रसोपवास आदि के प्रयोग से रोग को जड़ मूल से निकाल बाहर किया जाता है। अरण्यवासी, जीवन विज्ञान आयुर्वेद के आविष्कारक ऋषियों को लम्बी उम्र, आरोग्य प्राप्ति का मुख्य प्रयोग उपवास ही था जिसको आधार बनाकर विश्व के अनेक प्रयोगशालाओं में अद्भुत खोजें हुई हैं तथा हो रही है। उसका शोध निम्न है -

1. शरीर में भोजन का पाचन (डाइजेशन) उपाचय (केटांबौलिज्म) अपचय (एनाबौलिज्म) तथा उत्सर्जन (एक्सक्रीशन) सतत चलता रहता है। उपवास काल में पाचन एवं उपाचय की शक्ति न्यून हो जाती है। उसकी सारी शक्ति निर्माण एवं विषाक्त पदार्थो के निकालने में संलग्न हो जाती है।
2. शरीर के रोग को दूर करने वाली शक्ति ऑटो हीलिंग सिस्टम, टूट फूट को दुरूस्त करने वाली ऑटोरिपेयरिंग सिस्टम, ऑटो ट्रीटमेन्ट सिस्टम तथा ऑटो मोनिटरिंग सिस्टम स्वतः जागृत हो जाती हैं तथा शरीर के समस्त मेकेनिज्म को स्वास्थ्य की दिशा में गतिशील करते हैं।
3. उपवास काल में शरीर में संचित खाद्य पदार्थ प्रोटीन, फैट, कार्बोहाइड्रेटादि ऑटोलाइसिस प्रक्रिया द्वारा शरीर को पोषण देने में संलग्न हो जाती है। उपवास काल में कमजोरी प्रायः मानसिक होती है। उपवास काल में यथासंभव विश्राम करें ताकि शरीर की शक्ति रोग मुक्त होने में लगे।
4. उपवास काल में चमत्कार होता है। कैल्सियम तथा लोहा का सात्म्य तेजी से होने से लाल रक्त कण एवं हिमोग्लोबिन बढ़ जाते हैं। हड्डियाँ मजबूत होती हैं। बढ़े हुए श्वेत रक्तकण, इ.एस.आर. यूरिया, यूरिक एसिड, कोलेस्टरॉल, एल.डी.एल., ट्राइग्लिसराइड्स क्रमशः सामान्य स्तर पर आ जाते है।
5. उपवास में इन्सुलिन रेजिस्टेन्स इक्सरसाइज रेजिस्टेन्स एवं अन्य आरोग्य नकारात्मक प्रतिरोधक प्रतिक्रया की स्थिति दूर होती है।
6. उपवास काल में अस्थायी रूप से पेशाब में पस सेल्स कीटोनबौडीज की वृद्धि होती है जो धीरे-धीरे रोगमुक्त होने पर स्वतः कम हो जाती है।
7. उपवास में कोशिकीय मेटाबॉलिज्म सही ढंग से नियंत्रित, नियमित एवं नियोजित हो जाती है।
8. अपूर्ण एवं असंतुलित ऑक्सीजन के अणु जो वसा के आक्सीडेशन (पेरोक्सीडेशन) के दौरान बनते हैं यानि पेरॉक्साइड फैट, ऑक्सीजन रेडिकल, हाइड्रोक्सिल रेडकल कोशिकाओं के अंदर बाहर से आक्रमण करके उनकी झिल्ली, एन्जाइम, प्रोटीन, डी.एन.ए. आदि को नष्ट कर बुढ़ापा तथा बुढ़ापा जन्य बीमारियाँ पैदा करते हैं। उन सभी से लोहा लेने, जूझने लड़ने तथा अन्त में नष्ट या उदासीन करने का कार्य उपवास, कम कैलोरी वाला असंतुलित आहार, रसाहार तथा फलाहार आदि सफलता के साथ करते हैं।
9. लम्बी उम्र प्राप्त करने के वाले प्राणियों के अन्दर कुछ खास प्रकार के शक्तिशाली एन्जाइम सुपर ऑक्साइड डिस्म्यूटेज (एस.ओ.डी.) ग्लूथिओल तथा अन्य अनेक प्रकार के कैटालिस्ट एन्जाइम तथा

एण्टीऑक्सीडेन्ट तथा एन्जाइम मधुमेह, गठिया, संधिवात, मोतियाबिन्द, हृदय रोग, कैन्सर, अल्जीमर, पार्किन्स, हंटटिग्टन्स आदि प्रोग्रेसिव डिजेनरेटिव रोग से सुरक्षा प्रदान करते हैं। उपवास काल में इन स्वास्थ्य रक्षक इन्जाइमों का सम्बर्द्धन होता है। डिजेनरेशन रिजेनरेशन में रूपान्तरित होने लगता है।

10. लम्बी उम्र का प्रमुख कारण बी.एम.आर. का कम होना जरुरी है, उपवास एवं रसाहार काल में बी.एम.आर. कम होने लगता है। बी.एम.आर. कम होने से फ्री रेडिकल का निर्माण भी कम होता है।
11. उपवास के दौरान कैंसरकारी प्रोनियोप्लास्टिक कोशिकाएं नष्ट एवं नियंत्रित होने लगती है। साथ ही कैंसर कोशिकाओं का विभाजन दर कम एवं नियंत्रित होने लगता है।
12. उपवास काल में रक्त शर्करा की मात्रा नियंत्रित होने से क्राँसलिंकिंग की प्रक्रिया कम हो जाती है। खून में ग्लूकोस का स्तर अधिक होने से ग्लूकोस की उपस्थिति में कोशिका के अन्दर तथा दो कोशिकाओं के मध्य प्रोटीन के अणु चिपक कर जाली सदृश संरचना बनाते है, यही क्रांसलिंकिग है। क्राँसलिंकिंग के कारण फेफड़े तथा दिल की क्षमता कम हो जाती है। खून की नलियाँ सख्त हो जाती है, आँखों के लेंस धुंधले हो जाते हैं। उपवास क्राँसलिंकिंग को नियंत्रित करके इन समस्त अंगों की क्षमता को बढ़ाता है।
13. उपवास काल में कॉलेस्टरॉल की झिल्लियाँ एडिपोस टिशूस तथा यकृत तथा मांसपेशियों में संग्रहीत ग्लाइकोज़िन से ऊर्जा प्राप्त होती है। एन्जाइम मेकानिज्म सुदृढ़ एवं सशक्त होता है।
14. पाचन संस्थान के सभी अंगों यकृत, आमाशय, कोलन, अग्न्याशय प्लीहा, छोटी आंत, बड़ी आंत के सभी हिस्सों को परिपूर्ण विश्राम मिल जाता है। उनकी कार्यक्षमता एवं सक्रियता बढ़ जाती है। आंतों में स्थित रसांकुरों की अवशोषण एवं सात्म्य क्षमता बढ़ जाती है।
15. आंतों की कोशिकाओं की झिल्लियों का संरचनात्मक पुनर्विन्यास इस प्रकार परिवर्तित हो जाता है कि आवश्यकता अनुसार ज्यादा से ज्यादा ऊर्जा प्राप्त हो सके।
16. उपवास काल में स्नावयिक संवेदनात्मक, कायिक, मानसिक, आध्यात्मिक विश्राम मिल जाता है।
17. 2 से 5 दिन का उपवास आत्मानुशासन में किया जा सकता है। उपवास काल में पानी अवश्य पीए ज्यादा कमजोरी लगने पर नींबू पानी शहद लें। कुछ दिनों तक फलोपवास, रसोपवास अवश्य लें।
18. उपवास हमेशा संतरा मौसम्बी के रस से तोड़े। अभाव में किसी सब्जी के रस, सूप, दाल का पानी अथवा छाछ से छोड़े। तरल पदार्थ तीन-तीन घंटे के अन्तर से लें। धीरे-धीरे ठोस आहार पर आयें।
19. भूख न देखे रूखी भात नींद न देखें टूटी खाट यानि भूख लगने पर रूखी रोटी भी अमृत तुल्य लगती है यह है वास्तविक भूख लेकिन झूठी भूख है, जैसे घर में लौकी की सब्जी का नाम सुनते ही भूख खत्म हो जाये और मटर पालक पनीर के नाम से भूख लगना झूठी वासनाओं की भूख है। उपवास में सही वास्तविक भूख के साथ स्वास्थ्य भी लौट आता है।
20. गर्भावस्था, अत्यधिक दुर्बल, यक्ष्मा, पेट व आंत का अल्सर तथा अन्य विषम स्थिति में उपवास निषेध है।
21. लम्बा उपवास, उपवास-विशेषज्ञ के निर्देश से करें क्योंकि उपवास काल में हीलिंग क्राइसिस से स्वास्थ्य साधक घबरा सकता है। जबकि हीलिंग क्राइसिस शुभ एवं स्वास्थ्यप्रद होता है।
22. जठराग्नि भोजन को पचाती है। उपवास में भोजन नहीं मिलने पर विजातीय दोषों को खाने लगती है। विजातीय तत्व खत्म हो जाने पर शरीर स्फूर्ति चुस्ती एवं तंदुरुस्ती से भर जाता है। ऐसी अनुभूति पर उपवास तोड़, अन्यथा अग्नि सप्त धातुओं को खाने लगती है, भुखमरी पैदा होती है। जिसकी अन्तिम परिणति मौत है जब कि उपवास का अन्तिम फल स्वस्थ्य जीवन है।

कहानी

बुद्धि और भाग्य

एक समय बुद्धि और भाग्य में झगड़ा हुआ। बुद्धि कहती मैं बड़ी और भाग्य कहता कि मैं बड़ा। बुद्धि ने भाग्य से कहा - " यदि तू बड़ा है तो यह गड़रिया जो वन में भेड़ें चरा रहा है, इसे बिना मेरी सहायता के बादशाह बना दें तो मैं मान लूंगी कि तू बड़ा है।" यह सुनकर भाग्य ने उसको बादशाह बनाने का प्रयत्न किया।

भाग्य ने एक बहुमूल्य खड़ाऊँ का जोड़ा, जिसमें लाखों रुपयें के हीरे जवाहरात जड़े हुए थे, लाकर गड़रिये के आगे रख दिये। गड़रिया उसको पहनकर फिरने लगा। फिर भाग्य ने एक सौदागर को वहाँ पहुँचा दिया। सौदागर उन खड़ाऊयों को देखकर चकित हो गया और बोला - "तुम यह खड़ाऊँ का जोड़ा बेंचोगे ?" गड़रिए ने कहा - "क्या दाम लोगे?" गड़रिए ने कहा - "दाम क्या बताऊँ ? मुझे रोज रोटी खाने के लिए गांव जाना पड़ता है, अगर तुम दो मन भुने चने इस खड़ाऊँ के जोड़े की कीमत दे दो तो मैं चने चबाकर भेड़ों का दूध पी लिया करूंगा और गांव में जाने के दुःख से छूट जाऊँगा।" अभिप्राय यह है कि दुर्बुद्धि गड़रिए ने ऐसी बहुमूल्य खड़ाऊँ, जिसमें एक-एक हीरा लाखों रुपये का था, दो मन भुने हुए चने में बेच दिया।

यह देखकर भाग्य ने और बल दिया। उस सौदागर को एक बादशाह के दरबार में पहुँचा दिया। जिस समय वहाँ सौदागर ने खड़ाऊँ बादशाह के आगे रक्खी, बादशाह देखकर चकित हो गया और उसने सौदागर से पूछा - "तुमने यह खड़ाऊँ का जौड़ा कहाँ से लिया ?" सौदागर ने जवाब दिया - "एक बादशाह मेरा मित्र है, उसने यह खड़ाऊँ मुझे दी हैं।" बादशाह ने पूछा - "क्या उस बादशाह के पास ऐसी और खड़ाऊँ हैं ?" सौदागर ने उत्तर दिया - 'जी हां'। बादशाह ने पूछा - "क्या उस सौदागर के कोई लड़का भी है ?" सौदागर ने कहा - "हाँ उसके लड़का भी है।" यह सुनकर बादशाह ने कहा - "जनाब, मेरी लड़की की सगाई उस बादशाह के लड़के से करा दो ।"

यह सब बातें तो भाग्य के बल से हुई, परन्तु सौदागर को बादशाह की पिछली बात सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि उसे ज्ञात था कि खड़ाऊँ की जोड़ी तो मैंने गड़रिए से ली है, न कोई बादशाह न उसका लड़का, परन्तु इस झूठ बात के मुँह से निकल जाने से उसने सोचा कि अगर इस समय मैं अपने झूठ का भेद खोलता हूँ तो बादशाह न मालूम क्या दण्ड देगा। यह ख्याल कर उसने विचार किया कि जिस तरह हो सके, बादशाह से कहा - "मैं आपकी लड़की की सगाई करने के लिए जाता हूँ।" यह कहकर जिस ओर से वह आया था, उसी ओर को पुनः रवाना हो गया।

जब वह उस स्थान पर पहुँचा, जहाँ उसने गड़रिए को देखा था, तो क्या देखता है कि वह गड़रिया उससे विशेष मूल्य का खड़ाऊँ का जोड़ा पहिन रहा है। सौदागर यह देख हैरान हो गया। उसने सोचा कि वह कोई सिद्ध पुरुष है, जिसको इस प्रकार की वस्तुएँ कुदरत से प्राप्त हो जाती है। उसने सोचा कि यहाँ ठहरकर इसका हाल मालूम कर लेना चाहिए। यह सोचकर उसने यहाँ डेरे लगा दिए और उसके पास ताम्बा, जो लदा हुआ था, उसे उतारकर उसने वृक्ष के नीचे एक आरे रख दिया जब दोपहर हुआ, तो गड़रिया धूप का मारा उस वृक्ष के नीचे आया जहाँ ताँबा रखा हुआ था। उसने उस ढेर के सहारे अपना सिर लगाकर सो गया। उसके तकिया लगाने से भाग्य ने उस ताँबे को सोना कर दिया।

जब सौदागर ने यह देखा, तब उसे ख्याल आया कि जिस मनुष्य के सिर लगाने से ताँबा सोना बन जाता है। उसको बादशाह बनाना कौन बड़ी बात है। यह सोचकर सौदागर ने कुछ गांव मोल ले लिये और उन गांवों में दुर्ग बनाना प्रारम्भ कर दिया और कुछ सेना भी रख ली। जब सब सामान तैयार हो गया, तब गड़रिये को पकड़कर दुर्ग में ले गया और उसे अच्छे बादशाही कपड़े पहना दिये। मंत्री, सेवक आदि सभी रख दिये। पुनः बादशाह को चिट्ठी

लिखी कि "हमारे बादशाह ने आपकी लड़की की सगाई स्वीकार कर ली है। जो तिथि आप नियत करें, बारात उसी दिन पहुँच जाए।" बादशाह ने तिथि नियत कर लिख भेजा।

इधर ब्याह की तैयारियां होने लगी। एक दिन जब दरबार लगा हुआ था, सारे मंत्री बैठे हुए थे। गड़रिया बादशाही तख्त पर तकिया लगाकर बैठा था। उस समय गड़रिये ने सौदागर से कहा - "तुम मुझे छोड़ दो, मेरी भेड़ें किसी के खेत में चली जायेंगी, तो वह मुझे पीटेगा।" यह सुनकर सब लोग हँस पड़े और सौदागर दिल में सोचने लगा, इसका क्या इलाज किया जाए। जो कहीं उस बादशाह से इसने ऐसा कह दिया, तो मैं बेप्रयोजन मारा जाऊँगा। पुनः सौदागर ने उस गड़रिये से कहा - "जो कुछ कहना हो मेरे कान में कहना।

ब्याह की तारीख समीप आ गई। सौदागर बारात लेकर रवाना हुआ और बादशाह के शहर के समीप आ गया, उधर बादशाह का मंत्री बहुत से कामदारों और सेना के सहित अगवानी को आया तो उन्हें देखकर गड़रिये को ख्याल आया कि शायद मेरी भेड़ें उनके खेत में घुस गई और ये मुझे पकड़ने आये हैं, परन्तु बात कान में कहे जाने के कारण किसी को विदित न हुई और लोगों ने पूछा- "शाहजादे साहब क्या कहते हैं? सौदागर ने जवाब दिया - "जितने मनुष्य अगवानी के लिए आए हैं, सबको पाँच-पाँच लाख रुपया दिया जाय।" सबको पाँच-पाँच लाख रुपया दिया गया।

शहर में प्रसिद्ध हो गया कि एक बड़े भारी बादशाह का लड़का ब्याह के लिए आया है, जो प्रत्येक मनुष्य को लाखों रुपया ईनाम देता है। बादशाह भी डरा कि मैंने बड़े भारी बादशाह से सम्बन्ध बना लिया है, परमेश्वर मेरी प्रतिष्ठा रखें। उस गड़रिये का ब्याह बादशाह की लड़की से हो गया।

यहाँ तक तो बुद्धिमान् सौदागर के सलिसिले से भाग्य कृतकार्य हुआ; परन्तु रात को जब गड़रिया अकेला बादशाही महल में सोया और वहाँ झाड़-फानूस और लैम्प जलते हुए तो इसको ख्याल आया कि जंगल में जो भूतों की आग सुली थी, वह यहाँ है। मैं इसमें जलकर मर जाऊँगा। वह गड़रिया यह सोच ही रहा था कि इतने में बादशाह की गड़रिये के कमरे की तरफ आई जब इसने जेवरों की आवाज सुनी, तो उसे ख्याल आया कि अभी तक चुड़ैल से बचा हूँ, न मालूम यहाँ कितनी और चुड़ैलें आवें, इसलिए यहाँ से भाग चलना चाहिए। यह सोच ही रहा था कि उसे एक जीना ऊपर की ओर दीख पड़ा। वह झट से ऊपर चढ़ गया और उसने एक तरफ छज्जे से हाथ डालकर नीचे कूदकर भागने का इरादा किया उस समय अक्ल ने भाग्य से कहा - "देख, तेरे बनाने से यह बादशाह न बना, बल्कि अब गिरकर मरेगा।" और अपनी नासमझी से वह गड़रिया गिरते ही मर गया।

शिक्षा - भाग्य का अर्थ है 'कर्मफल'। मनुष्य यदि समझदार, बुद्धिमान और विचारशील हो तो अपनी बुद्धि और परिश्रम से भाग्य को भी बदल सकता है, किन्तु बुद्धिहीन पाये हुए को भी खो देता है। इसलिए बुद्धि और परिश्रम के द्वारा अपने भाग्य का खुद निर्माण करना चाहिए।

सीखने योग्य बातें -

1. जो पिता का भक्त और आज्ञाकारी पुत्र है वही वास्तव में पुत्र है। जो पालन-पोषण करता है वही पिता है, जो विश्वसनीय है और संकट में साथ दे वही मित्र है, जो बुरे वक्त में पति के सुख-दुःख में साथ निभाये वही पत्नी है और जो पत्नी के प्रति एकनिष्ठ होकर उसका रक्षण करे और उसकी सुख-सुविधा के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे, वही पति है।
2. मनुष्य कितना ही सुन्दर और आकर्षक हो और कितने ही बड़े खानदान का हो, यदि वह विद्याहीन हो तो वह ढाक के फूल और फूल जैसा ही है जो देखने में तो सुन्दर होता है पर उसमें सुगन्ध नहीं होती।
3. जो जन्म से अन्धा है उसे कुछ नहीं दिखता, जो कामवासना से अन्धा हो रहा है उसे भी कुछ दिखाई नहीं देता और जो नशे में डूब रहा हो, उसे भी कुछ सूझता नहीं, जो गरजमन्द होता है, उसे भी दिखाई नहीं देता और जो स्वार्थ से अन्धा होता है उसे तो कुछ भी दिखाई नहीं देता। ऐसे लोग आँख होते हुए भी विवेकहीन होने के कारण अपना भला बुरा नहीं देख पाते।

गीता-संदेश

श्रीमद्भागवद्गीता मानव मात्र की आत्मा को अमरता प्रदान करती है। श्रीमद्भागवतगीता पाप हरती है और पुण्य भरती है। जो मनुष्य श्रीमद्भागवद्गीता में रति रखता है। उसके लिए गीता संजीवनी जड़ी है। इस श्रीमद्भागवद्गीता मांगलिक ग्रन्थ का श्रवण और पाठ करने से सदा मंगल ही होता है।

भगवान् श्रीकृष्ण श्रोतव्य और श्रुत वचनों से मनुष्यों की प्रज्ञास्थिरता को प्राप्त हो भगवत् स्वरूप में कैसे जा मिलती है। उसे वर्णन करते हुए कहते है -

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते सदा स्थास्यति निश्चला।
समाधिविचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि॥
2/53।।

भावार्थ - भाँति-भाँति के वचनों को सुनने से विचलित हुई तेरी बुद्धि जब परमात्मा में अचल और स्थिर ठहर जायेगी तब तू योग को प्राप्त हो जायेगा अर्थात् तेरा परमात्मा से नित्य संयोग हो जायेगा।

विशेषार्थ - अर्जुन का मन धर्म संकट में पड़ गया है। **श्रुति विप्रतिपन्ना ते ....** अर्जुन के मन में यह श्रुति विप्रति है कि अपने कुटुम्ब और गुरुजनों का नाश करना भी उचित नहीं है और अपने क्षत्रिय धर्म (युद्ध न करना) का त्याग करना भी उचित नहीं है। एक तरफ तो धर्म कहता है कि कुटुम्ब की रक्षा करो और दूसरी तरफ धर्म कहता है कि क्षत्रिय धर्म का पालन युद्ध करो। यदि कुटुम्बियों की रक्षा करे तो युद्ध नहीं होगा और यदि युद्ध करें तो कुटुम्बियों की रक्षा नही होगी। इन दोनों बातों में अर्जुन की श्रुति विप्रति है। जिससे उनकी बुद्धि विचलित हो रही है। प्रायः मनुष्य के जीवन में भी ऐसी समस्या आ जाती है। इस काम को करने से भी नहीं बनता और उस काम को करने में भी नहीं बनता ऐसी ही स्थिति अवध नरेश की महिषी कौशल्याजी की हुई जब भगवान् श्रीराम वन जाने की आज्ञा मांगने लगे।

राखि न सकइ न कहि सक जाहू। दूहूँ भाँति उर दारुन दाहू॥
धरम सनेहू उभयँ मति घेरी। भई गति साँप छुछन्दरि केरी॥

यहाँ पर माता कौशल्या श्रीराम को न तो यह कह सकती है कि वन में मत जाओ और न ही यह कह सकती है कि वन में चले जाओं। धर्म और स्नेह दोनों ने कौशल्या जी की बुद्धि को घेर लिया है। उनकी दशा साँप और छछून्दर की-सी हो गयी है। सर्प छछून्दर को पकड़ लेता है किन्तु उसे यदि खा जायेगा तो मर जायेगा और छोड़ देगा तो अन्धा हो जायेगा। लौकिक मोह ममता रूपी दल-दल को तरने पर भी नाना प्रकार के **बहुवेदशास्त्रम्** शास्त्रों के मतभेदों को लेकर अर्जुन की भी यही दशा हो गयी। इससे भगवान् श्रीकृष्ण पुनः कहते है कि हे अर्जुन! इस प्रकार के संशयों से चंचल हुई तेरी बुद्धि जब स्थिर होकर एक स्थान में समाधिस्थ हो जायेगी अर्थात् विपेक्ष से वर्जित होकर विकल्प शून्य तथा संशय रहित दीपशिखा के समान कम्पन रहित हो जायेगी और **समाधावचलाबुद्धिः** समाधि में अचल हो जायेगी तथा **योगमवाप्स्यसि** तब तू योग को प्राप्त करेगा। ज्ञान के द्वारा शुद्ध हो गयी है जिसकी बुद्धि जीव और परमात्मा एक हो गये हैं जिसकी दृष्टि में, उसी को योग कहते है। भगवान् श्रीकृष्ण के प्रवचन सुनकर मोह कलिल और श्रुति विप्रति - प्रपत्ति दूर हो जाने पर योग को प्राप्त हुए स्थिर बुद्धि वाले पुरुष के क्या लक्षण हैं। भगवान् श्रीकृष्ण से अर्जुन पूछते हैं। अर्जुन उवाच -

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव ।
स्थितधाः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम्॥
2/54

भावार्थ - अर्जुन ने कहा कि हे केशव! समाधि में स्थित परमात्मा को प्राप्त हुए स्थिर बुद्धि पुरुष का क्या लक्षण है ? वह स्थिर बुद्धि पुरुष कैसे बोलता है, कैसे बैठता है और कैसे चलता है ?

विशेषार्थ - जब भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन से ऐसा कहा कि समाधिस्थ पुरुष को योग की प्राप्ति होती है। इसलिए हे अर्जुन! तू अचल समाधि को प्राप्त कर। इतना सुनकर अर्जुन के हृदय में चार प्रश्नों ने जन्म लिया। उसने

भावुकता में आकर एक साथ भगवान् श्रीकृष्ण से चार प्रश्न किए। जिनकी प्रज्ञा बुद्धि सदा एक रस स्थिर है ऐसे स्थितप्रज्ञ दो प्रकार के है। एक तो वे जो समाधिस्थ होते है अर्थात् जाग जाते हैं। इन दोनों प्रकार के स्थित प्रज्ञों के विषय में अर्जुन के चार प्रश्न हैं उन चार प्रश्नों में एक प्रश्न इस श्लोक के पूवार्द्ध में किया है और शेष तीन प्रश्न जो उत्थान पाये हुए अर्थात् समाधि से जगाये हुए स्थित प्रज्ञ पुरुषों के लिए है। जो इस श्लोक के उत्तरार्द्ध में किये गये हैं, जो प्रथम प्रश्न है उसको सुनो। अर्जुन भगवान् श्री कृष्ण से कहते हैं कि - **स्थित प्रज्ञस्य का भाष समाधिस्थस्य केशव !** हे सुन्दर केश वाले वासुदेव! जो पुरुष समाधिस्थ है अर्थात् योग साधना करते- करते समाधि तक पहुँच गया है तथा उस समाधि में स्थिर हो जाने से जिसकी प्रज्ञा की स्थिति आत्मा में हो गयी है अर्थात् जो उस परमात्मा में लीन होकर आगे-पीछे, ऊपर-नीचे, दायें-बायें किसी दिशा में न देखकर केवल शांभवी मुद्रा द्वारा चढ़ते-चढ़ते ब्रह्मरन्ध्र तक पहुँच गया है, वहाँ सहस्र दल की कर्णिका में जिसकी बुद्धि अटल स्थिर हो गयी है, उसके क्या लक्षण है अर्थात् उसको लोग किन लक्षणों से पहचानते हैं मुख्य अभिप्राय यह है कि उसके पहचानने के लिए कौनसी परिभाषा है अर्थात् गुरुजनों ने कौनसे विशेष स्वरूपों के द्वारा उसकी पहचान बतायी है सो हे केशव मुझ पर कृपा करके बताओ यह मेरा प्रथम प्रश्न है जो समाधिस्थ स्थित प्रज्ञ पुरुषों के विषय में किया गया है। अब अर्जुन आधे श्लोक में समाधि से जगे हुए पुरुषों के लिए जो तीन प्रश्न किये हैं उनको कहते हैं - **स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत ब्रजेत किम् ।** अर्जुन कहता है कि हे भगवान्! जो समाधि से जग गया है अर्थात् जिसकी मनोवृत्ति बहुत काल पर्यन्त समाधि में रहकर फिर संसार की ओर लौट पड़ी है और जो सूर्य, चन्द्र, आकाश, पृथ्वी और दाये-बायें देखने लग गया है। उसके विषय में मुझे समझा कर कहो। जैसे निद्रा से जगकर मनुष्य चारों तरफ देखने लगता है और अपने व्यवहार के अनुसार बोलता है, बैठता है, चलता है ऐसे ही यह स्थितधी पुरुष समाधि से जगकर क्या बोलता है, कैसे बोलता है, कैसे चलता है। इन तीनों बातों को भी मुझे समझा कर कहो। प्रथम प्रश्न **किं प्रभाषेत** के पूछने का अभिप्राय है कि जैसे साधारण पुरुष प्यार भरी बातें करने लगता है। ऐसे ही समाधि से जगने पर क्या करता है अथवा उसकी भाषा में अन्य प्रकार की कोई विशेषता है कि जैसे साधारण पुरुष निद्रा से जगने पर अपने सांसारिक काम कोई और व्यापार धन्धा करने लगता है इत्यादि। इसी प्रकार क्या समाधि से उत्थित पुरुष भी करता है अथवा इसके काम में कुछ और विशेषता है। तृतीय प्रश्न है **ब्रजेतकिम्** के पूछने का अभिप्राय यह है कि जैसे साधारण मनुष्य अपने सुख, दुःख, हानि, लाभ इत्यादि में हर्ष, विषाद को प्राप्त होता है क्या ऐसे ही समाधि से जगा हुआ पुरुष भी करता है अथवा उसमें कोई अन्य प्रकार की विशेषता है। अर्जुन ने भगवान् श्रीकृष्ण को केशव कहकर सम्बोधित किया। इसका तात्पर्य था कि जैसे आपने केशी नाम के दानव का बधकर के प्राणियों को सुखी कर दिया। वैसे ही मेरे इस मोह रूप दानव का नाश कर सुखी करो। अर्जुन के प्रश्न सुनकर भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं -

प्रजाहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थित प्रज्ञस्तदोच्यते ॥

भावार्थ - श्री भगवान् बोले - हे अर्जुन! जिस काल में यह पुरुष मन में स्थित सम्पूर्ण कामनाओं को भली-भांति त्याग देता है और आत्मा से आत्मा में ही सन्तुष्ट रहता है। उस काल में वह स्थित प्रज्ञ कहा जाता है।

विशेषार्थ - अब भगवान् श्रीकृष्णचन्द आनन्दकन्द इस श्लोक से प्रारम्भ करके इस अध्याय की समाप्ति पर्यन्त अर्जुन के चारों प्रश्नों के उत्तर की पूर्ति हेतु समाधिस्थ स्थित प्रज्ञ तथा समाध्युत्थित-स्थित प्रज्ञ पुरुष के लक्षणों का वर्णन करते हैं।

प्रजाहति ..... हे पृथा का पुत्र अर्जुन! अपने आत्मा से अपने आत्मा में ही सन्तुष्ट रहने वाला पुरुष अर्थात् आत्मानन्द में मग्न रहने वाला आत्मज्ञानी है। वह जब अपने हृदय की सब प्रकार की कामनाओं का परित्याग कर देता है तब ही **स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते** कहा जाता है। भगवान् श्रीकृष्ण ने इस श्लोक में स्थित प्रज्ञ के लक्षणों का प्रथम प्रश्न का उत्तर दिया है। मेरे प्रिय पाठकगणों। इस श्लोक को आत्मानन्द में ही रमण करने वाले पुरुषों की प्रथम भाषा क्या है ? **जहाति** क्रिया है इसके साथ **प्र** उपसर्ग लगा हुआ है उपसर्ग देने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य को कामना तो करनी ही नहीं चाहिए क्योंकि सब कुछ भगवान् के अधीन हो जाती है। अपनी कोई कामना ही नहीं इसी को **प्रजहाति** पद कहा गया है।

श्री हनुमानचरित मानस

वंदना कांड

ना साधन-सम्पत्ति हो ना श्रद्धा विश्वास ।
वे जन पहुँच न सकब एहि मानसरोवर पास॥39॥

जिन लोगों के पास ना तो किसी प्रकार की साधना साधन-रूपी सम्पत्ति है तथा ना ही प्रभु में श्रद्धा और विश्वास है, वे लोग उस श्री हनुमानचरित मानस रूपी मानसरोवर के पास नहीं पहुँच सकेंगे।

चतुर्दिशा जल धार से है यह सर परिपूर्ण।
अक्षय हैं जलधार ये तातां चिरंतर पूर्ण॥40॥

चारों दिशाओं से गिरनेवाली जलधाराओं से यह मानसरोवर नित्य परिपूर्ण रहता है। हे तात! ये चारों जलधाराएं चिर काल पर्यन्त अक्षय एवं पूर्ण रहेंगी।

प्रभु अगस्ति कैलाश-शिव बालमीकि सह शिष्य।
संत-पयोनिधि निःसृत चतुर्धार सुविशिष्य ॥41॥

(1) ऋषि अगस्त एवं भगवान् श्रीराम, (2) भगवान् शिव एवं कैलाश, (3) बाल्मीकि एवं उनके शिष्यगण तथा (4) संतो-रूपी क्षीरसागर एवं भक्तगण-रूपी वक्ताओं के मुख-कमलों से निकली हुई चारों धाराएं ही उस श्री हनुमान-चरित-रूपी-मानसरोवर में गिरने वाली चार विशिष्ट जल धाराएँ हैं।41।।

मंगल मूरति मंगल करता। हर अवतार वरद हनुमंता।
रामभक्ति सेवा सतकाश। शुभद हेतु हनुमत अवतारा॥42॥

भगवान् शिव के अवतार, वरदाता-हनुमानजी सदैव मंगलकर्ता एवं मंगलमूर्ति स्वरूप हैं। भगवान श्रीराम की भक्ति, सेवा एवं उनका सत्कार ही हनुमान जी के शुभदायक अवतार के कुछ कारण हैं।

राम रसायन के रखवारे। आप अंजना मातु दुलारे।
रामभक्ति सरसावन हेतु। रहे धरा पर कपिकुल केतु॥

ये अंजनामाता के दुलारे श्री हनुमानजी सदैव श्रीराम-रसासन के रखवाले हैं। श्रीराम प्रभु की भक्ति को नित्य, सरस, पल्लवित, पुष्पित एवं फलित करते रहने के लिए ये कपिकुल की ध्वजा-स्वरूप श्री हनुमानजी उसी पृथ्वीलोक पर ही रह रहे।

काजल कर्मज अहमज प्राकृत।
जन के संकट नाशहिं हनुमत॥
सबहिं विघ्न परिपाक काल के।
मिटे तुरत हनुमत जप सुन के॥

भक्तों के सभी संकट, चाहे वे कालज हों, कर्मज हो, अहमज हों, या प्राकृत हों, उन सभी संकटों को श्री हनुमानजी मिटा देते हैं। साधन के परिपाक काल में होने वाले सभी विघ्न, हनुमानजी का नाम-जप सुन कर तुरंत ही मिट जाते हैं।

जब परिपक्व होहिं सब साधन।
तब तेहिं देवत राम रसायन॥
शब्द ब्रह्म है राम रसायन। करत निरामय स्वस्थ सुपावन॥

साधक के सभी साधन जब परिपक्व हो जाते हैं तब हनुमानजी उस साधक की योग्यता परख कर उसे राम-रसायन प्रदान करते हैं। राम-रसायन वास्तव में स्वयं शब्दब्रह्म का साक्षात् वाङ्मय स्वरूप है। यह साधक को सर्व विकार-रहित, स्वस्थ एवं परम पवित्र बना देता है।

राम स्वयं परब्रह्म हैं हनुमत ब्रह्म-विचार।
भरत लखन शत्रुघ्न सिय तसु विचार चर चार॥43॥

प्रभु-श्रीराम स्वयं परब्रह्म हैं तथा हनुमानजी स्वयं ब्रह्म-विचार-स्वरूप है तथा सीताजी, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न उस ब्रह्मविचार के चार चर अर्थात् श्रवण, मनन,

निदिध्यासन एवं बोध है।

परम्परा अन्तः बहिर त्रय साधन समुदाय - ।
से होकर शुचि साधु जन एहि सर लेय नहाय॥44॥

परम्परागत साधन, साधन-चतुष्टयादि बहिरंग साधन तथा श्रवण-मननादि अंतरंग साधन, तीन तरह के साधन समुदाय हैं जिनके द्वारा साधुजन पवित्र होकर उस श्री हनुमान-चरित-मानस रूपी मानसरोवर में स्नान करते हैं।

तन रोगी साधन-रहित क्षीण जासु संकल्प।
यह मानस तेहिं भी मिले हो यदि भक्ति प्रकल्प॥45॥

किंतु, जो लोग तीनों शरीरों से रोगी हैं तथा उक्त तीनों साधन-समुदाय से भी रहित हैं और जिनकी संकल्प शक्ति भी क्षीण है, वे लोग भी उस श्री हनुमान चरित मानस को प्राप्त कर सकते हैं। उनके पास उत्तम भक्ति-प्रकल्प हो।

न्हावत ही मिट जात तत् काल त्रिविध ज्वर ताप।
स्वस्थ शांतमानंदघन जन हो जाता आप ॥46॥

उस श्री हुनमान-चरित-मानसरूपी सरोवर में स्नान करते ही तत्काल त्रिविध (दैहिक-दैविक-भौतिक) ज्वर शांत हो जाते हैं और स्नान करने वाले तत्क्षण स्वस्थ होकर परम शांति को प्राप्त करते हुए आनन्दमय स्वरूप हो जाते हैं।

हो सुपात्र शुचि स्वच्छ तन करण तथा गो शुद्ध।
हित-मित युक्ताहार हो वृत्ति स्वस्थ सम्बुद्ध ॥47॥
वह अधिकारी करत जब यह मानस सर स्नान ।
राम रसायन दें उसे तब प्रमुदित हनुमान ॥48॥

जो सुपात्र लोग-अन्तर्बाह्य से शुचि हों, जिनके देह त्रय, अन्तःकरण- चतुष्टय तथा दशेन्द्रियाँ स्वच्छ हो, जो सभी इन्द्रियों के लिए सदैव हित-मित एवं युक्तियुक्त आहार ही ग्रहण करते हों तथा जिनकी वृत्ति सदैव स्वस्थ एवं सम्यकतया बुद्ध रहती हो, वे अधिकार-सम्पन्न पात्र लोग जब उस श्री हनुमान चरित मानस रूपी मानसरोवर में स्नान करते हैं, तब ही हनुमानजी प्रमुदित होकर उन्हें राम-रसायन प्रदान करते हैं। ।47-48॥

रक्षा सह पालन करें पवन पुत्र हनुमान।
उनका जो उस चरित का करें सश्रद्धा ध्यान॥49॥
तेज औज महावीर का तम उनका हर लेय ।
सहित विपर्यय अज्ञता संशय सब हत देय ॥50॥

जो भक्त उस श्री हनुमानचरितमानस का श्रद्धा सहित पाठ एवं ध्यान आदि करते हैं उनकी श्री हनुमानजी सदैव सब संकटों से रक्षा एवं पालन-पोषण करते हैं। ऐसे भक्तों के तमोगुण, अज्ञान, विपर्यय एवं समस्त संशय श्री महावीर-हनुमानजी के तेज और ओज से स्वयं नष्ट हो जाते हैं।।49-50।।

तब षड भाव-विकार-रिपु हों तुरंत ही नष्ट।
साम्य होत गुण दोष का कोऽहम सोऽहम् स्पष्ट॥51॥

उन लोगों के षड्भाव-विकार एवं षड्-रिपु तुरन्त ही नष्ट होकर त्रिदोष (कफ-पित्त-वात) एवं त्रिगुण (सत-रज-तम) में साम्य स्थापित होकर उनको कोऽहम् (अर्थात् मैं कौन हूँ) और सोऽहम् (अर्थात् द्वैत का पूर्ण निषेध होकर अद्वैय स्वरूप का अपरोक्ष अनुभव) का पूर्ण बोध हो जाता है।

हो लीला-कैवल्य का तब सम विधि आनन्द ।
सत्यं ज्ञान अनंत हो, ज्ञप्ति सच्चिदानंद ॥ 52॥

परिणामस्वरूप उन लोगों के लिए यह समस्त प्रपंच केवल जगतलीला का ही एक रूप होकर, हर प्रकार से आनन्दस्वरूप हो जाता है। सच्चिदानंद ब्रह्म के सत्य, ज्ञान एवं अनंतादि लक्षणों का बोध होकर वे ज्ञाता, ज्ञान एवं ज्ञेयादि की त्रिपुटी का निषेध करते हुए मात्र ज्ञाप्ति स्वरूपानुभव हो जाते हैं।

महावीर हनुमान के नाम अनेकानेक ।
गुण प्रभाव परिप्रेक्ष्य में दीप्त नाम प्रत्येक॥53॥

वैसे तो महावीर हनुमानजी के अनेकानेक नाम हैं और वे समस्त नाम अपने-अपने विशिष्ट गुण, प्रभाव एवं परिप्रेक्ष्य में स्पष्टतः प्रकाशित भी हैं।

प्रमुख नाम 'हनुमान' से भय नासत तत्काल।
भय का कारण द्वैत है अद्वय अंजनिलाल ॥54॥

तथापि, उनके प्रमुख नाम 'हनुमान' से समस्त भय तत्काल नष्ट हो जाते हैं। उसका कारण यह है कि बिना द्वैत के कभी भय नहीं होता और आंजनेय मूलतः अद्वयस्वरूप है अतः, भय उनका नाम सुनने के उपरांत टिक नहीं सकता हैं।

भारत की ऋषि परम्परा

(महर्षि भृगु)

महर्षि भृगु का व्यक्तित्व तेजस्वी एवं गौरवशाली था। उनकी मुखाकृति शान्त और नेत्रों से महानता प्रदर्शित होती थी। अपनी पवित्रता और ऋषि परम्परा से प्रसिद्ध भार्गव वंश की उत्पत्ति इन्हीं से हुई। पौराणिक साहित्य में अन्य वैदिक ऋषियों की तरह महर्षि भृगु के सम्बन्ध में भी अनेक कथाएँ प्राप्त होती है।

पूर्व कल्प में महर्षि भृगु से सम्बन्धित दो कथाओं का उल्लेख प्राप्त होता है। एक उनके जन्म के विषय में और दूसरी इनकी मृत्यु के विषय में है। जब ब्रह्मा चराचर जगत की सृष्टि कर रहे थे, तब भविष्य में होने वाले प्रजापतियों की उत्पत्ति उनके शरीर के विभिन्न अंगों से हो रही थी। भृगु की उत्पत्ति उनके चर्म से मानी जाती है। वे आगे चलकर एक महान आध्यात्मिक विभूति हुए और देवताओं और ऋषियों की सभा में पूजित हुए।

द्वितीय कथा बहुत प्रसिद्ध है। दक्ष प्रजापति ने एक वैदिक यज्ञ बृहस्पतिसवन का अनुष्ठान किया, जिसमें सभी मुख्य देवता और ऋषिगण उपस्थित थे। भगवान् शिव के प्रति अपना द्वेष प्रदर्शित करने के लिए दक्ष ने उनको और अपनी पुत्री (शिव की पत्नी देवी सती) को आमंत्रण नहीं दिया। सती किसी तरह यज्ञ में गईं, किन्तु उनकी उपस्थिति को सम्मानपूर्वक स्वीकार नहीं किया गया। इस तरह स्वयं को अपमानित समझकर उन्होंने अग्नि में प्रवेश किया और भस्म हो गई। यह संवाद पाकर शिव ने उग्र रूप धारण किया और अपने गणों के साथ मिलकर यज्ञ-स्थल, ऋत्विजगण और समस्त देवताओं का संहार कर दिया। भृगु भी उन सब ऋत्विजों में से एक थे और इस कलह में उनकी मृत्यु हो गई।

विद्वानों के मतानुसार भृगु का पुनर्जन्म वैवस्वान मन्वन्तर में वरुण के पुत्र के रूप में हुआ। वरुण एक महान वैदिक देवता हैं। वेदों में अनेक मंत्रों द्वारा उनको सम्बोधित किया गया है। पुराण में एक कथा आती है। एक दिन प्रातःकाल जब वरुण देव ब्रह्मयज्ञ का अनुष्ठान कर रहे थे। तब बालक पवित्रता आदि गुणों में विकसित होने लगा।

महाभारत के शान्तिपर्व में एक संवाद प्राप्त होता है, जिसमें महर्षि भृगु महर्षि भारद्वाज के प्रश्नों का उत्तर दे रहे हैं। इस संवाद में दर्शन, तत्त्व-मीमांसा, ब्रह्माण्ड-विज्ञान, पुनर्जन्मवाद, नीतिशास्त्र और समाजशास्त्र का अत्यन्त गहन और प्रांजल विवेचना किया गया है।

रामायण में वर्णन आता है कि महर्षि भृगु के शाप को फलीभूत करने के लिए भगवान् विष्णु को रामावतार में सीता का वियोग सहन करना पड़ा। यह कथा इस प्रकार है : देवासुर संग्राम में असुरों को पराजय स्वीकार करनी पड़ी। असुरों की माता दिति शोकाकुल होकर महर्षि भृगु की सहधर्मिणी पुलोमा के पास सहायता माँगने गई। पुलोमा ने करुणावश उग्र तप किया और अपनी शक्ति शेष जीवित असुरों को प्रदान किया। देवों ने इस बात की जानकारी भगवान् विष्णु को दी। विष्णु ने वज्रप्रहार कर पुलोमा का सर धड़ से अलग कर दिय। भृगु इससे अत्यन्त विचलित हो गए। उन्होंने शाप दिया कि भगवान् विष्णु को भी उनकी तरह पत्नी-वियोग का शोक सहन करना पड़ेगा। विष्णु ने अपना चक्र भृगु की ओर फेंका। भृगु ने चक्र को अपनी ओर आता देखकर विष्णु से क्षमा माँगी। चक्र तो अपने स्थान पर पुनः लौट गया, किन्तु भृगु का शाप यथावत् रहा। तदनन्तर भृगु ने अपनी पत्नी पुलोमा को पुनरुज्जीवित कर दिया।

श्रीमद्भागवत में एक प्रसिद्ध कथा है। ऋषियों में यह विवाद छिड़ गया कि ब्रह्मा, विष्णु और महेश, इन तीनों में कौन बड़े हैं। इसके निष्कर्ष के लिए महर्षि भृगु को चुना गया। भृगु ने निश्चय किया कि वे तीनों को क्रोधित करने का प्रयत्न करेंगे और देखेंगे कि इनमें से कौन श्रेष्ठ है। वे सर्वप्रथम ब्रह्मा के पास गए और बिना उनकी अनुमति के अपने स्थान पर बैठ गए। इससे ब्रह्मा क्रोधित हो गए। इसके बाद वे शिव के पास गए। शिव उन्हें देखकर प्रसन्न हुए और उनका आलिंगन करने के लिए आगे बढ़े, किन्तु भृगु पीछे हट गये। शिव को क्रोध आ गया और वे त्रिशूल से उन पर प्रहार करने के लिए उद्यत

हो गये। इसके बाद जब भृगु विष्णु की परीक्षा के लिए उनके पास गए, तब वे सो रहे थे। उनका सत्कार नहीं हुआ, इसलिए क्रोध का स्वाँग कर उन्होंने विष्णु के वक्षःस्थल पर लात मारी। विष्णु ने नींद से जगकर देखा कि भृगु क्रोध से तमतमा रहे हैं। भगवान विष्णु ने उनसे क्षमा मांगी और प्रेमपूर्वक उनका सम्मान किया। भृगु ने अपने जिस चरण से भगवान को लात मारी, भगवान उनके वे चरण दबाने लगे। महर्षि भृगु ने अन्त में निष्कर्ष दिया कि विनम्रता और क्षमाशीलता के गुणों के कारण भगवान विष्णु ही सबसे श्रेष्ठ हैं।

भारतीय धार्मिक साहित्य की विशाल ज्ञान राशि में उपनिषदों का स्थान उत्कृष्ट ग्रन्थों के रूप में है। यजुर्वेद के तैत्तिरीय उपनिषद में भृगुवल्ली नामक अद्भुत अध्याय है। भृगु अपने पिता वरुण के पास जिज्ञासा लेकर जाते हैं, 'भगवन् ! मुझे ब्रह्म का उपदेश कीजिए।' वरुण ने उत्तर दिया, 'ये प्रत्यक्ष दिखाई देने वाले सभी प्राणी जिनसे उत्पन्न होते हैं, उत्पन्न होकर जिनके सहयोग से सब जीते हैं और प्रयाण करते हुए जिसमें प्रवेश करते हैं, उसको तत्त्व से जानने की इच्छा कर।' इस तरह वे अपने पुत्र को क्रमशः मानवीय व्यक्तित्व (व्यष्टि) के स्थूल से लेकर सूक्ष्म स्तर तक और तदनुरूप समष्टि-ब्रह्माण्ड की सत्ता का ज्ञान देते हैं। शिष्य की विलक्षण एकाग्रता उसे उत्तरोत्तर सत्य का साक्षात्कार करने में सहायता करती है और अन्त में उसे सर्वोच्च ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति होती है।

सर्वोच्च ज्ञान मन-वाणी से परे है, उपाधि के द्वारा ही उसका चिन्तन सम्भव है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि चराचर जगत में जो कुछ भी ऐश्वर्ययुक्त और शक्तियुक्त वस्तु है, वह उनके अंश से है। वे अपनी अनेक विभूतियों का वर्णन करते हैं। उनमे से एक हैं, 'महर्षीणां भृगुरहं' - अर्थात् महिर्षियो में मैं भृगु हूँ।

ज्योतिष में विज्ञान समाहित

ज्योतिष विज्ञान है अथवा नहीं इस विषय पर बहस होती रहती है। ज्योतिष को विज्ञान मानकर विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में शामिल किया जा रहा है। ज्योतिषी विद्या एक ठगी विद्या है। ऐसा दोषारोपण करने वालों की देश में बाढ़ सी आ गई है। जो राजनेता रात के अंधेरे में ज्योतिषि के घर जाकर उसके पैरों पर गिरकर कुर्सी की भीख मांगते हैं वे भी ज्योतिष के विरोध में झंडा लेकर खड़े हो गये हैं। देश के खगोलविद् जिन्हें संस्कृत भाषा 'रामः, रामौ, रामाः नही आता वे ज्योतिष के वैज्ञानिकों को नकारने में लग गये हैं। इससे बड़ी दुःख की बात क्या हो सकती है। वस्तुतः देखा जाय तो ज्योतिष ब्रह्माण्ड दर्शन का विषय है। दृश्य जगत् का उद्भव एवं विकास ही जिस तत्व से हुआ, उसे वेदों, उपनिषदों तथा पुराणों ने "ब्रह्म" शब्द से अभिहित किया है। ब्रह्मा का लक्षण है बृहत्व तथा 'बृहमनत्व' बृहत का अर्थ है विशालता महत्ता ब्रह्म इतना विशाल, महान और विभू है कि उसे किसी भी शब्द से व्यक्त नहीं किया जा सकता जिसके कारण पदार्थों का बृन्धन होता है। विविध रूपों में विस्तार तथा विकास होता है। सहायिका के रूप में विद्यमान उसकी आदि शक्ति, सत् रज और तम इस तीनों त्रिगुणात्मक स्वरूपो में सारी सृष्टि है जो ब्रह्म का पर्याय है। सत् ही एक ऐसा है जिसका कभी अभाव नहीं होता। गीता में कहा गया है "नाभावो विद्यते सतः" वेदों में सत् तत्व की अनेक व्याख्या की गयी है। इस सत् में ही ज्ञान और विज्ञान दोनों समाहित हैं। ज्योतिष उसी सत्व तत् का अंग है तो वह ज्ञान और विज्ञान से अलग कैसे हुआ ? यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में तो सत् को शक्ति केन्द्रों के रूप में दर्शाया गया हैं।

तदेवाग्निस्तदादित्यिस्तदवायुः तदु चन्द्रमा।
तदेवं शुक्रं तद्ब्रह्म त आपः स प्रजापतिः॥

इसी प्रकार अर्थर्ववेद में कहा गया है ।

स धाता स विधती वायुर्गभ उच्छ्रितम् ।
सोऽमर्मा स वरूणः स रूद्रः स महादेवः॥
सोआग्नि स ऽ सूर्यः स ऽ एवं महायकः ।

अथर्ववेद के ही एक मंत्र में सत् तत्व का विवेचन इस प्रकार किया गया है -

सः वरूणः सायकग्निर्भवति स भिन्नो भवति।

संस्कृति - इतिहास की पुनरावृत्ति

◆ संस्कृति की सीता का हुआ अपहरण

संस्कृति की सीता का रावण ने अपहरण कर लिया था, तब भगवान रामचंद्र जी राक्षसों समेत रावण को मारकर सीता को वापस लाने में सफल हुए थे। इतिहास की वह पुनरावृत्ति फिर से होनी है। मध्यकाल में हमारी संस्कृति की सीता को बनवास हो गया। सांप्रदायिकता इस कदर फैली, मत-मतांतर इस कदर फैले, बाबाओं ने अपने-अपने नाम के इतने मजहब खड़े कर दिये कि हिंदू समाज का एक रूप ही नहीं रहा। संस्कृति के साथ में अनाचार शामिल हो गया। बुद्ध के जमाने में ऐसा भयंकर समय था कि हमारी संस्कृति उपहास का कारण बन गई। घिनौने उद्देश्यों को संस्कृति के साथ में शामिल कर दिया गया था। पाँच काम बड़े घिनौने माने जाते हैं और इन पाँचों कामों को भी धर्म के साथ जोड़ दिया गया था और संस्कृति को कलंकित कर दिया गया था। वे पाँचों हैं -**''मद्यं मांसं तथा मतयो मुद्रा मैथुनमेव च। पञ्चतत्त्वमिदं देवि! निर्वाणं मुक्ति हेतवे॥''** ये पाँचों घिनौने काम संस्कृति के साथ शामिल हो गए।

यज्ञ का रूप कैसे घिनौना हो गया था ? आपको मालूम नहीं है, तब मनुष्यों को मारकर होम किया जाता था। यह क्या था ? यह बनवासकाल था और अब क्या हो गया ? अब बेटे! संस्कृति की सीता रावण के मुँह में चली गई, जहाँ बेचारी की जान निकल जाने की जोखिम है और जहाँ से वापस आने का मार्ग दिखाई नहीं पड़ता। सीता राक्षसों के मुँह में से कैसे निकलेगी ? चारों ओर समुद्र घिरा हुआ है। उस समुद्र को कौन पार करेगा ? रावण कितना जबरजस्त है ? राक्षस कितने जबरजस्त हैं? इनसे लोहा कौन लेगा ? संस्कृति की सीता को वापस लाने का काम कठिन मालूम पड़ता है। अब वह कहाँ चली गई ? वह तो मध्यकालीन युग था। उसमें आस्तिकता फिर भी थी। उस समय किसी कदर आस्तिकता का नाम निशान तो था। राम-रहीम का जिक्र तो आता था। यज्ञ की कोई बात तो कहता था धर्म का कोइ नाम तो भी लेता था।

नास्तिकों का आज का युग

आज हम लंका के जमाने में रह रहे हैं, जहाँ कि धर्म को अफीम की गोली कहा जा रहा है। पढ़े-लिखें लोगों में जाइए और उनसे जानिए कि धर्म क्या है? तो वे यहीं कहेंगे कि धर्म माने अफीम की गोली, जिसको खाकर के आदमी मदहोश हो जाता हैं। कर्तव्यों को भूल जाता है। समझदार लोगों में, बुद्धिजीवी वर्ग में संस्कृति के लिंए वही शब्द इस्तेमाल होता है - अफीम की गोली और भगवान के बारे में दार्शनिक नीत्से का एक वचन मुझे बार-बार याद आ जाता है और खटकता भी रहता है। नीत्से यों कहते थे कि खुदा मर गया और मरे हुए खुदा को हमने इतने नीचे दफन कर दिया है कि अब उसके दोबारा जिंदा होने की कोई उम्मीद नहीं है। वह अब दोबारा नहीं जी सकेगा। खुदा को अब हमने मार दिया। नास्तिक नीत्से कहता था कि खुदा नाम की कोई चीज दुनिया में नहीं है। जो कुछ खुदा के नाम पर दुनिया में पाया जाता है, वह केवल वहम है और हम इस वहम को दुनिया से मिटाकर छोड़ेंगे।

नीत्से तो अब नहीं रहा, लेकिन उसका काम - फिलॉसफी का काम साइंस ने अपने कंधे पर उठा लिया। साइंस ने कहा कि परमात्मा की अब कोई आवश्यकता नहीं है और धर्म की कोई जरूरत नहीं है। डार्विन ने कहा कि अगर हम आप धर्म के मामले में दखल देंगे तो आदमी को मानसिक बीमारियाँ हो जायेंगी। मनोविज्ञानी फ्रॉयड ने कहा कि ये बहन है, ये बेटी है और इसके साथ-साथ ब्रह्मचर्य है और यह आपका पतिव्रत धर्म है - अगर इस तरह की बेकार की बातें फैला देंगे तो आदमी के दिमाग में कॉम्प्लेक्स पैदा हो जायेंगी अतः उच्छृंखल रहने दीजिए, स्वेच्छाचार करने दीजिए। जैसे कि जानवरों में होता है, वैसे तो आदमी को भी स्वेच्छाचार का मौका मिलना चाहिए। ये कौन कहता था ? डार्विन से लेकर फ्रॉयड तक ने यही बातें कहीं।

मानव जीवन तबाह हो जायेगा

अभी मैं आपसे विज्ञान की बातें कह रहा था, नास्तिकतावादी दर्शन की बात कह रहा था, लंका की बात कह रहा था। आपको तो मालूम नहीं है। आप उनके संपर्क में नहीं रहे हैं। आप बुद्धजीवियों के संपर्क में नही रहे हैं। आप कॉलेज में पढ़े नही है। कॉलेज में पढ़े होते तो जिस बात का हवाला मैं अभी दे रहा था, इसको बढ़ा-चढ़ा कर आप कहते और आपका मजाक उड़ाया जाता। हमारी संस्कृति लंका में जा रही है। अब उसको वापस लाने के लिए क्या करना पड़ेगा ? अगर संस्कृति वापस न आ सकी तो दुनिया तहस-नहस हो जायेगी, दुनिया मिट जायेगी। दुनिया जिंदा न रह सकेगी। परलोक खराब हो जायेगा, स्वर्ग नहीं मिलेगा। मुक्ति नहीं मिलेगी। इन बेकार की बातों को जाने दीजिए। स्वर्ग की, मुक्ति की, परलोक की, चमत्कार की बात कहता हूँ। इस संसार की बात कहता हूँ। अगर हमारी संस्कृति और धर्म, जिसको हर आस्तिकता कहते हैं, जिंदा नहीं रही तो दुनिया तबाह हो जायेगी। हमारे गृहस्थ जीवन का सफाया हो जायेगा। पारवारिक जीवन खत्म हो जायेगा, जैसा कि जानवरों में खत्म हो गया है। कुत्ते का कोई कुटुंब नहीं होता है ? कुत्ते की कोई औरत नहीं होती है ? कोई बाप नहीं होता ? कोई नहीं होता। कुत्ता अकेला होता है।

इसी तरीके से इन्सान को क्या करना पड़ेगा? कुत्ते के तरीके से अकेले रहना पड़ेगा और औरत क्या होती हैं? अरे साहब! धर्मपत्नी को कहते हैं, जिसके साथ शादी होती हैं। शादी किसे कहते हैं ? मौसम को शादी कहते हैं। एक साल एक बीबी से शादी की, अगले साल उसे भगा दिया। दूसरे साल दूसरी शादी कर ली। तब आप कितने साल तक जवान रहेंगे ? हम पचास साल तक जवान रहेंगे और कोशिश करेंगे कि पचास औरतें आ जाएँ। हर साल एक नई आ जाए और दूसरी चली जाए। यूरोप में यही होता है। अब स्त्रियाँ भी इसी तरह रहेंगी। जो बाते मर्दों पर लागू होती हैं, वहीं बातें औरतों पर भी लागू होती हैं। कोई दांपत्य जीवन नहीं है। आज शादी ब्याह हुआ है, कल तक यह चलेगा कि नहीं, इसकी कोई गारंटी नहीं है। आज सारे यूरोप में यही हो रहा है।

पारिवारिक जीवन नीरस - तहस नहस

आज गृहस्थ जीवन में क्या हो रहा है ? माँ-बाप किसे कहते हैं ? माँ- बाप उसे कहते हैं, जब तक कि लड़का नाबालिग रहता है और जब तक वह जिसके सहारे रहता है, उसका नाम होता है - माँ-बाप! जब वह बड़ा हो जाता है तब ? तब माँ-बाप का बेटे से कोई ताल्लुक नहीं है और बेटे का माँ-बाप से कोई ताल्लुक नहीं है। जानवरों में जब तक बच्चा छोटा होता है, उसकी माँ उसका ध्यान रखती है और जब बच्चा बड़ा हो जाता है तो सींग मार देती है। नहीं साहब! बड़े बच्चे से भी मोहब्बत करनी चाहिए। क्यों? छोटे बच्चे को तो नेचर चाहती है कि उसका कोई गार्जियन होना चाहिए। जैसे ही बच्चा बड़ा हुआ, मोहब्बत खतम हो जाती है और बच्चे भाग जाते हैं और माँ-बाप भी भाग जाते हैं। आज यही हो रहा है।

आप संस्कृति को खतम कर रहे हैं या करना चाहते हैं। संस्कृति खतम होगी तो हमारा पारिवारिक जीवन तहस-नहस हो जायेगा। अगर हमारा बुद्धिवाद जिंदा रहेगा और हमारा अर्थशास्त्र जिंदा रहेगा तो फिर क्या होगा ? अर्थशास्त्र के हिसाब से हमने, आपने, हरेक ने स्वीकार कर लिया है कि बुड्ढे बैल को कसाई के यहाँ जाना चाहिए। दुनिया के निन्यानबे फीसदी जानवर कसाई के यहाँ चले जाते हैं। दूध देने वाले हो, चाहे हल में चलने वाले हो, दोनों का अंत क्या होगा ? भाई साहब ! दोनों का अंत कसाई के यहाँ होगा। नहीं साहब ! खूँटे पर बाँधकर खिला दीजिए। नहीं, खूँटे पर बाँधकर खिलाने से हमारी जगह घिरेगी और चारा खराब होगा। फिर नए जानवर हम कहाँ से पालेंगे ? इनको हम भूसा कहाँ से खिलायेंगे ? इनको एक ही रेमिडी है कि इन बुड्ढे जानवरों को, चाहे वे गाय हो, चाहे वे बैल हों, दोनों का ही कसाई के यहाँ जाना चाहिए। आजकल बिल्कुल यही हो रहा है। बूढ़े होने पर निन्यानबे फीसदी जानवर कसाई के यहाँ चले जाते हैं। एक प्रतिशत अपनी मौत मरते हों, तो बात अलग है।

आशा और आत्मविश्वास ही दिव्य जीवन प्रदान करती है। **- स्वामी विवेकानन्द**

आलस्य दरिद्रता का दूसरा नाम है। **- सन्त तिरुवाङुवर**

प्रश्नोत्तर रत्नमालिका

श्री शंकराचार्य

कुत्र विषं दुष्टजने किंमिहाशौचं भवेदृणं नृणाम्।
किमभयमिह वैराग्यं भयमपि किं वित्तमेव सर्वेषाम्॥41॥

प्र. विष कहाँ रहता है ?

उ. दुर्जन मनुष्य में विष रहता है।

प्र. इस संसार में अशुद्धि क्या है ?

उ. मनुष्यों के लिए ऋण ही अशुद्धता की भावना के समान है।

प्र. संसार में अभय वस्तु कौन सी है ?

उ. वैराग्य ही अभय है।

प्र. फिर भय क्या है ?

उ. धन ही सबके लिए भय है।

को दुर्लभो नराणां हरिभक्तिः पातकं च किं हिंसा।
को हि भगवत्प्रियः स्यात् योऽन्यं नोद्वेजयेदनुद्विग्नः॥ 42॥

प्र. मनुष्यों में दुर्लभ क्या है ?

उ. हरिभक्ति मनुष्यों में दुर्लभ है।

प्र. पाप क्या है ?

उ. हिंसा करना पाप है।

प्र. भगवान को प्रिय कौन है ?

उ. जो स्वयं उद्वेग-रहित है और दूसरों को भी उद्विग्न नहीं करता, वह भगवान को प्रिय है।

कस्मात् सिद्धिः तपसः बुद्धिः क्व नु भूसुरे कुतो बुद्धिः।
वृद्धोपसेवया के वृद्धा ये धर्मतत्त्वज्ञाः ॥43॥

प्र. किससे सिद्धि (सफलता) प्राप्त होती है ?

उ. तपस्या से सिद्धि प्राप्त होती है।

प्र. बुद्धि कहाँ रहती है ?

उ. ब्राह्मण (के समान व्यक्ति) में बुद्धि रहती है।

प्र. इस प्रकार की बुद्धि कहाँ से प्राप्त होती है ?

उ. वृद्धों की सेवा से बुद्धि प्राप्त होती है।

प्र. वृद्ध कौन है ?

उ. धर्म-तत्त्व को जानने वाला वृद्ध है।

संभावितस्य मरणादधिकं किं दुर्दशो भवति ।
लोके सुखी भवेत् को धनवान् धनमपि च किं यतश्चेष्टम् ॥44॥

प्र. सम्मानित व्यक्ति के लिए मृत्यु से भी अधिक दुखदायक क्या है ?

उ. अपयश।

प्र. संसार में सुखी कौन है ?

उ. धनवान संसार में सुखी है।

प्र. धन क्या है ?

उ. जिससे इच्छित वस्तु प्राप्त हो, वही धन है।

सर्वसुखानां बीजं किं पुण्यं दुःखमपि कुतः पापात्।
कस्यैश्वर्यं यः किल शंकरमाराधयेद् भक्त्या ॥46॥

प्र. सब सुखों का मूल क्या है ?

उ. पुण्य सभी सुखों का मूल है।

प्र. दुख किससे प्राप्त होता है ?

उ. पाप-कर्म से दुख होता है।

प्र. ऐश्वर्य किससे प्राप्त होता है ?

उ. भक्तिपूर्वक भगवान शंकर की आराधना करने से एश्वर्य की प्राप्ति होती है।

को वर्धते विनीतः को वा हीयते यो दृप्तः।
को न प्रत्येतव्यो ब्रूते यश्चानृतं शश्वत् ॥46॥

प्र. कौन (जीवन में) बढ़ता अथवा प्रगति करता है।

उ. जो विनयशील है वह जीवन में बढ़ता है।

प्र. कौन हीन है ?

उ. जो अभिमानी है, वह हीन है।

प्र. किसका विश्वास नहीं करना चाहिए ?

उ. जो सदैव झूठ बोलता है, उसका विश्वास नहीं करना चाहिए।

कुत्रानृतेऽप्यपापं यत्रोक्तं धर्मरक्षार्थम्।
को धर्मोऽभिमतो यः शिष्टानां निजकुलीनानाम्॥47॥

प्र. किस अवस्था में झूठ बोलने पर भी पाप नहीं होता ?

उ. धर्मरक्षा के लिए झूठ बोलना पाप नहीं होता है।

प्र. धर्म क्या है ?

उ. जो स्वयं के कुलीन शिष्टों के अभिमत हो, उसे धर्म कहते हैं।

विद्यार्थियों के लिए गीता

श्रीमद्भागवद्गीता अक्षय ज्ञान का भण्डार है। वह जीवन जीने के लिए अन्तर्दृष्टि प्रदान करने वाली महत्वपूर्ण पुस्तक है। इसके साथ ही यह विश्वव्यापी स्तर पर अध्ययन की जाने वाली आध्यात्मिक ग्रन्थ भी है। गीता की शिक्षा विश्व के असंख्य नर-नारियों के लिए दैनिक जीवन का एक अंग बन चुकी है। निःसन्देह गीता भारत का धर्मग्रन्थ है, लेकिन भारत के साथ ही साथ दूसरे देशों के विद्वानों, चिन्तकों, सन्तों, नेताओं, वैज्ञानिकों, आध्यात्मिक साधकों एवं साधारण जनमानस, इन सबके लिए गीता प्रेरणादायक एवं शक्ति का स्रोत है।

भारत के अधिकांश विद्यार्थियों के लिए गीता एक रहस्यमयी पुस्तक है। कुछ लोगों ने इसका केवल नाम सुना है तथा कुछ लोग यह जानते है कि यह महाभारत महाकाव्य का एक अंश है। लेकिन बहुत से युवक यह नहीं जानते कि गीता उनके व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित है। प्रायः यह भी अनुभव किया जाता है कि गीता जिन विषयों की शिक्षा देती है, वह आधुनिक विद्यार्थियों के लिए 'बहुत उच्च' होती है। यद्यपि वे गीता का सम्मान करते हैं, लेकिन सोचते है कि इसको समझना उनके लिए बहुत कठिन हैं। इसलिए वे गीता को पढ़ना पूर्ण रूप से छोड़ देते हैं या कभी बाद में सुअवसर मिलने पर पढ़ लेंगे, या भविष्य में पढ़ लेंगे, जो समय कभी नहीं आता है।

वर्तमान जीवन में विभिन्न चुनौतियों और कठिनाईयों के समय में विद्यार्थी यह जानना चाहते हैं कि 'गीता हमें क्या शिक्षा दे सकती है ?'

आधुनिक शिक्षा पद्धति इस विषय में अभिरूचि बढ़ाने के लिए अधिक ध्यान नहीं देती। इस समय मोबाइल फोन, एस.एम.एस., इन्टरनेट, ई-मेल, डिजीटल कैमरा, आईपॉट, टेलीविजन इत्यादि का बेधड़क व्यवहार करने के कारण युवकों को विभिन्न प्रकार के आन्तरिक और बाह्य समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। विद्यार्थियों की 'बाहरी-समस्या उनकी विभिन्न प्रकार की मानसिक चंचलता के साथ ही अपनी पढ़ाई-परीक्षा पर ध्यान केन्द्रित करने के कारण उत्पन्न होती है। विद्यार्थियों को जीवन में निश्चित लक्ष्य का अभाव, मन की एकाग्रता की कमी, समकक्ष प्रतिद्वन्द्विता तथा उपभोक्तावादी और स्वार्थमय जीवन के कारण 'आन्तरिक समस्या' का सामना करना पड़ रहा है। उच्च जीवन के आदर्श जैसे सत्यसंयम, आत्मत्याग, अनुशासन, इत्यादि स्वस्थ एवं सशक्त व्यक्तित्व के मूल आधार है, जिनकी आज उपेक्षा की जा रही है। इसलिए अभिभावक, माता-पिता, विद्यार्थियों के ऐसे व्यवहार तथा सामान्य जीवन-धारा से दुखी और निराश है।

भगवद्गीता के पास युवा मन को देने के लिए बहुत कुछ है। सामान्य धारणा के विपरीत, नवयुवक जो विद्यार्थी है तथा भविष्य के लिए सोच रहे हैं, गीता उनको बहुत-से व्यावहारिक सुझाव तथा सहायता प्रदान कर सकती है। गीता केवल दार्शनिक विचारों की ही नहीं, व्यावहारिक सुझावों की भी पुस्तक है। विद्यार्थी गीता के अध्ययन से बहुत सारी बातें सीख सकते हैं।

गीता का निष्ठापूर्वक अध्ययन किसी को भी एक सफल विद्यार्थी तथा बेहतर मनुष्य बना सकता है। गीता आत्मसुधार और व्यक्तित्व के विकास के लिए - जैसे मनुष्य का वास्तविक स्वरूप, मन की एकाग्रता को विकसित करना, नकारात्मक सोच को जीतना, क्रोध पर विजय, जीवन के

प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करना, सशक्त तथा पवित्र चरित्र का निर्माण करना, इत्यादि विभिन्न विषयों पर अनेक सुझाव तथा मार्गदर्शन प्रदान करती है।

गीता के मुख्य विचारों का संग्रह छात्रों की आवश्यकताओं के ध्यान में रखकर किया गया है। प्रिय विद्यार्थियों ! इसका अध्ययन करने पर आप अवश्य पायेंगे कि गीता कैसे मानव-जाति द्वारा चिन्तन किए गए कुछ सर्वश्रेष्ठ विचारों का सार है तथा कैसे यह आपके व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन को समृद्ध कर सकती है। इसका पाठ करने से गीता में विद्यमान ज्ञान का सौंदर्य आपके समक्ष प्रकट होगा और शान्ति से पढ़ने और उस पर बार-बार चिन्तन करने से आपको उसका गम्भीर एवं नया अर्थ ज्ञात होगा।

श्रीमद्भगवद्गीता के विषय में जानने योग्य कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य

1. भगवद्गीता सामान्यतः गीता के नाम से प्रसिद्ध है संस्कृत में गीता का अर्थ होता है - गीत। चूँकि यह गीत भगवान के अवतार श्रीकृष्ण ने गाया, इसलिए इसे भगवद्गीता कहते हैं। यद्यपि अन्य गीता भी है, जैसे - हंस गीता, अवधूत गीता, अष्टावक्रगीता आदि। लेकिन केवल भगवद्गीता के लिए ही 'गीता' शब्द का प्रयोग करते हैं।
2. गीता में 700 श्लोक है। जो 18 अध्यायों में विभक्त है। गीता महाभारत महाकाव्य का एक अंश है। (भीष्म पर्व में अध्याय 25 से 42 तक)
3. गीता का प्रत्येक अध्याय एक योग है और प्रत्येक का एक नाम है, जैसे - ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग इत्यादि। यह नाम प्रत्येक अध्याय के अन्त में दिया गया है।
4. इस पुस्तक में अर्जुन और श्रीकृष्ण का संवाद है। अर्जुन के विभिन्न नाम है, जैसे - पार्थ, पाण्डव, भारत, महाबाहो, कौन्तेय आदि। अर्जुन पाँच-पाण्डव भाइयों में से एक थे। वे अपने ही राज्याधिकार से वंचित कर दिये गये थे तथा प्रतिद्वन्द्वी चचेरे भाई कौरवों द्वारा बार-बार उत्पीड़ित होते हैं। सभी सन्धि-वार्ता और विकल्पों के असफल होने के बाद पाण्डव कौरवों के विरूद्ध युद्ध करने के लिए विवश हुए।
5. भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को परामर्श देते समय व्यक्तिगत सर्वनाम 'मुझे' का प्रयोग किया है। गीता में 'मैं' या 'मुझे' भगवान या परमात्मा हेतु प्रयोग किया गया है।
6. इसके साथ ही आत्मा शब्द का प्रयोग शरीर, मन या अहंकार को बताने के लिए भी किया गया है। गीता में आत्मा शब्द का प्रयोग हमारी अन्तरात्मा (या ईश्वरत्व) के लिए गया है।
7. कौरवों के नेत्रहीन पिता धृतराष्ट्र के सारथी संजय थे। उन्हें युद्ध देखने और युद्ध में क्या हुआ इसे बताने के लिए दिव्य-चक्षु का वरदान मिला था। धृतराष्ट्र ने संजय से पूछा, 'युद्धभूमि में क्या हुआ ?' इसी प्रश्न से गीता आरम्भ होती है। संजय ने कहा, कौरवश्रेष्ठ दुर्योधन ने राजगुरु द्रोणाचार्य के पास जाकर उन्हें अपने तथा पाण्डवों, दोनों ओर के योद्धाओं का परिचय दिया। उसके बाद दोनों ओर से युद्ध प्रारम्भ करने के प्रतीक शंख बजाए गए।
8. अर्जुन ने अपने सारथी श्रीकृष्ण से अनुरोध किया कि वे रथ को युद्धभूमि में दोनों सेनाओं के बीच में ले चलें। अर्जुन ने अपने पितामह तथा गुरु भीष्म और द्रोण को देखा। वे उनसे युद्ध करने के स्थान पर भयभीत और दुखित हो गये। उन्होंने किंकर्तव्यविमूढ़ होकर श्रीकृष्ण से कहा कि युद्ध करना व्यर्थ है तथा यह विभिन्न प्रकार के दुष्परिणामों जैसे - समाज और राज्य-विंध्वस आदि का कारण बनेगा। वे धनुष-बाण छोड़कर शोकाकुलचित्त से रथ के पीछे बैठ गये। उन्होंने श्रीकृष्ण से कहा - मेरे लिए क्या कल्याणकर है, उसे बताने की कृपा करें। आगामी श्लोकों के द्वारा श्रीकृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हैं। इसे संजय ने धृतराष्ट्र को बताया और हमें महान ऋषि वेदव्यास द्वारा प्रणीत महाभारत महाकाव्य में गीता जैसा ग्रन्थ उपहारस्वरूप प्राप्त हुआ।
9. श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उनके क्षत्रिय धर्म का पुनः स्मरण दिलाया तथा युद्ध को न्यायसंगत बताया। उन्होंने अर्जुन को संपूर्ण शोक, आशंका को त्यागकर युद्ध करने का परामर्श दिया। पहले अर्जुन युद्ध करना चाहते थे, लेकिन युद्धभूमि में महान योद्धाओं को देखकर भयभीत हो गये। इस वृत्तान्त से मानव-मन की तुलना की गई है। वह जीवन-संग्राम में विजय चाहता है, लेकिन जैसे ही समस्याएँ आती है, वह पूरा उत्साह, धैर्य तथा साहस

खो देता है। श्रीकृष्ण अर्जुन को उनकी कायरता के लिए धिक्कारते हैं तथा उनके संशय और भ्रम को दूर करते हैं।

10. श्रीकृष्ण और अर्जुन को उनके हृदय में स्थित दिव्य आत्मशक्ति और ज्ञान की ओर उनका ध्यान आकर्षित करते हैं।

11. यह युद्ध हरियाणा राज्य के छोटे से शहर कुरुक्षेत्र में हुआ था, ऐसा माना जाता है। कुरुक्षेत्र नई दिल्ली से 120 किलोमीटर की दूरी पर अवस्थित है और इसके आसपास महाभारत युद्ध से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण स्थल है।

12. कुरुक्षेत्र के युद्ध को मानव जीवन-संग्राम के प्रतीक के रूप में देखा जा सकता है। जहाँ पाण्डव सज्जनता, अच्छाई के द्योतक हैं तथा कौरव दुर्जनता, अपवित्र, असंयमित एवं अविवेकी मन से उत्पन्न बुराई के द्योतक हैं।

13. गीता हमें सकाम तथा निष्काम कर्म का फल, ध्यान की पद्धति, भगवान पर भक्ति, अपने स्वभाव और क्रोध पर नियंत्रण करना तथा आध्यात्मिक, नैतिक और शारीरिक सशक्तिकरण और मुक्ति कैसे प्राप्त करें, इत्यादि विभिन्न विषयों की विस्तृत शिक्षा प्रदान करती है।

1. दिव्यता ही तुम्हारा वास्तविक स्वरूप है

नैनं छिन्दति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥2.23॥

शस्त्र इस आत्मा को नहीं काट सकते। अग्नि इस आत्मा को नहीं जला सकती। जल इसे गीला नहीं कर सकता और वायु इस आत्मा को नहीं सुखा सकती।

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः॥2.24॥

इस आत्मा को अवयवरहित होने के कारण कोई काट नहीं सकता, जला नहीं सकता, दहन नहीं कर सकता और सुखा नहीं सकता। यह आत्मा नित्य, सर्वव्यापी, स्थिर, निश्चल और सनातन है।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि
संयाति नवानि देही॥2.22॥

जिस प्रकार मनुष्य जीर्ण वस्त्रादि का परित्याग कर दूसरे नये वस्त्र ग्रहण करता है, उसी प्रकार शरीरी जीव जीर्ण शरीर को छोड़कर दूसरे नये शरीर धारण करता है।

देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत ।
तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि॥2.30॥

हे अर्जुन, यह आत्मा सबके शरीर में सदा अवध्य है, इसलिए तुम्हें सभी जीवों की मृत्यु से शोक नहीं करना चाहिए।

2. तुम अपने भाग्य-निर्माता हो

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥6.5॥

अपने द्वारा अपना उद्धार करें। अपनी बुद्धि को नीचे न जाने दें। क्योंकि मनुष्य स्वयं का स्वयं ही मित्र है और स्वयं ही स्वयं का शत्रु है।

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्॥6.6॥

जिस व्यक्ति ने विवेकयुक्त बुद्धि से मन पर विजय प्राप्त कर ली है, उस जीव का वह मन ही मित्र है और जिसका मन अविजित, असंयमित है, वह मन ही शत्रुवत् व्यवहार करता है।

कूलर और शास्त्रीजी

यह उन दिनों की बात है जब लाल बहादुर शास्त्री उत्तर प्रदेश के गृहमंत्री थे। पी.डब्ल्यू.डी. विभाग के कर्मचारी घर में कूलर लगाने आये, बच्चों को प्रसन्नता हुई कि इस बार तो गर्मी अच्छी कटेगी, शाम को जब शास्त्रीजी घर आये तो उन्हें जानकारी हुई कि घर में कूलर लगाये जा रहे हैं तो उन्होंने सार्वजनिक निर्माण विभाग में फोन कर मना कर दिया। ललिता जी ने कहा कि यदि बिना मांगे कोई सुविधा मिल रही है तो क्यों नकारा जाये, शास्त्रीजी ने उत्तर दिया कि यह आवश्यक नहीं कि सदैव मंत्री पद पर बना रहूं। इससे बच्चों की आदतें बिगड़ जायेगी। मान लो लड़कियों को विवाहोपरांत यह सुविधा नहीं मिली तो उन्हें कष्ट होगा, जाने किन परिस्थितियों में उन्हें रहना पड़े।

स्वास्थ्य

ऋतुचर्या - ऋतु परिवर्तन

ऋतुओं का वातावरण में भिन्न-भिन्न प्रभाव होते हैं। आहार भी बदलता रहता है। आहार तो हम अपने आप नियंत्रित कर सकते हैं, उपवास आदि से शोधन भी कर सकते हैं, परंतु जो वातावरण के घटक हैं वे सीधे हमारी त्वचा, श्वसन संस्थान, रक्तवाही संस्थान पर प्रभाव डालकर सारे शरीर को प्रभावित करते हैं।

वातावरण का वात पर प्रभाव - तीन प्रकार के प्रभाव वात नामक दोष पर पड़ते हैं और वही बीमारी के हेतु बन जाते हैं। ये हैं वात क्षय, वात प्रकोप एवं वात प्रशमन। क्षय अर्थात् एकत्र हो जाना, प्रकोप अर्थात् बढ़ जाना एवं प्रशमन अर्थात घट जाना।

वात क्षय - ग्रीष्म ऋतु में जब शरीर की शक्ति क्षीण हो जाती है एवं पाचन क्षमता भी कम हो जाती है, मनुष्य पसीने से भी पानी को गँवाता है एवं शरीर से एक प्रकार से जलतत्व (फ्ल्युड एवं इलेक्ट्रोलाइट्स) कम होता चला जाता है। इससे वात एकत्र होता जाता है। भोजन में शुष्कता एवं हल्कापन भी वात क्षय बढ़ाते हैं, परन्तु ग्रीष्म के प्रभाव से यह इतना अधिक नहीं होता कि वात प्रकुपित हो जाए।

वात प्रकोप - वर्षा ऋतु में पाचनशक्ति एवं सामान्य शक्ति और अधिक कम हो जाती है। गरमी में ठंडक में अचानक परिवर्तन एक ही दिन में कई बार होता है। इससे वात एकत्र होकर प्रकोप की दिशा में चला जाता है। आयुर्वेद के विभिन्न विद्वान इस तथ्य से परिचित हो उपचार करते हैं।

वात शमन - शरद ऋतु में आर्द्रता एवं गर्मी का प्रभाव वातावरण में अधिक होता है। इसलिए शरदकाल में बढ़ा हुआ वात स्वतः घट जाता है एवं सात्मीकरण (होमियोस्टेसिस) की स्थिति आ जाती है।

वातावरण का पित्त पर प्रभाव - त्रिदोषों में कफ की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। इससे क्रमिक रोग जन्म लेते हैं, यदि ऋतु अनुसार कफ क्षय, प्रकोप एवं प्रशमन का ध्यान न रखा जाए।

कफ क्षय - हेमंत में स्वाभावतः भूख अधिक लगती है, शरीर में ताकत भी होती है। खाने-पीने की आदतें बदल जाती हैं और शिशिर ऋतु तक जाती रहती है। उस समय पाचन शक्ति, कम होने लगती है। वातावरण में ठंडक एवं न्यून पाचनशक्ति, परंतु आहार अधिक होने से कफ क्षय होने लगता है, अर्थात् कफ एकत्र हो जाता है।

कफ प्रकोप - वसंत का आगमन संचित कफ को पिघला देता है और नतीजा निकलता है, प्रकुपित कफ व उससे पैदा हुए रोगों के रूप में।

कफ प्रशमन - गर्मी के आगमन के साथ ही संचित, प्रकुपित कफ स्वतः शांत हो जाता है। यहाँ यह कहना जरूरी है कि ऋषियों की यह सब प्रतिपादित हाइपोथिसिस - परिकल्पनाएँ भोगे हुए यथार्थ हैं एवं तब के हैं, जब न हीटर, एयरड्राप, एयर कंडीशनर्स आदि होते थे। आज ये हैं तो दोष और ज्यादा हैं, क्योंकि कुसमय का ऋतु परिवर्तन दिन में कई बार होता है एवं जीवनशैली में खान-पान की विकृतियाँ जुड़ गई हैं। ऐसे में स्वाभावकि है कि ये त्रिदोष शरीर को अधिक प्रभावित करेंगे और रोगी बनायेंगे। जीवनशैली के रोग इसलिए आज ज्यादा है।

दोष शोधनम् - पंचकर्मो द्वारा शरीर का त्रिदोषों से शोधन किया जा सकता है। कफ दोष को वसंत ऋतु में वमन द्वारा, पित्त दोष को छोटी आँतों से शरद ऋतु में विरेचन द्वारा वात दोष को बड़ी आँतों से स्थापन वस्ति द्वारा वर्षा ऋतु में संपन्न कर मिटाया जा सकता है। ये पचंकर्म प्रकोप की स्थिति में ही करना ठीक रहते हैं, परंतु ये एकत्र न होने पाएँ ऐसी सावधानी रखी जाए। इसके

लिए जिस ऋतु में इनका प्रकोप होता है या होने की संभावना रहती है, उसके प्रारंभ में ही पंचकर्म कर लिए जाए तो प्रकोप की संभावना नहीं होती। शोधन तब नहीं करना चाहिए, जब ऋतु अपनी पूर्ण परिपक्वावस्था में होती हैं एवं शरीर भी कमजोर होता है।

हेमंत व शिशिर ऋतु में उचित है कि तैल मालिश नियमित रूप से की जाए एवं इसके लिए वातहर औषधियों का तैल (बलादि तैल, नारायण तैल) का प्रयोग किया जाए। वसंत ऋतु में नीम तैल, सरसों तैल या शीशम तैल से गरम मालिश की जाए। साथ ही गरम रेत के थैलों द्वारा स्वेदन भी किया जाए। वमन एवं नस्य भी किया जा सकता है। ग्रीष्म ऋतु में वातहर-पित्तहर स्नेहन घी की मालिश से करना चाहिए। वर्षा ऋतु में स्नेहन एवं विरेचन की ही अनुमति है। शरद ऋतु में औषधियुक्त घी (तिक्त घी) से स्नेहन किया जाए, हल्का स्वेदन तथा कुटकी, हरीतकी, शुंठी, आमलकी द्वारा विरेचन किया जाए। ये उपाय परीक्षित हैं, सिद्ध हैं एवं किसी रोग से व्यक्ति को बचाने में सक्षम हैं। हम यह फिर बता दें कि यहाँ पंचकर्म की संक्षिप्त चर्चा ही ऋतुओं के संदर्भ में की गई है।

ऋतु विपर्यय - आज ग्लोबल वार्मिंग के कारण हमारी दिनचर्या बदल जाने के कारण ऋतुओं में वे प्रभाव नहीं हैं, जो उनके स्वाभाविक गुण हुआ करते थे। ओले गिरना, बहुत ज्यादा ठंडक एवं शिशिर, शरद में गरम मौसम बहुतायत से देखने को मिलता है। यह बदला ऋतु का मिजाज ही रोगों को जन्म देता है, शरीर की जीवनीशक्ति की जमकर परीक्षा लेता है। इसका प्रभाव कृषि, पर्यावरण, उत्पन्न होने वाली शाक-सब्जियों, फलादि पर भी होता है तथा ग्रहण किए जाने पर ये भी गलत प्रभाव डालते हैं। इस पर ऋषियों ने संकेत मात्र किया था, पर आज यही सर्वाधिक चर्चित विषय बन गया है।

रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानन्द

एक बार रामकृष्ण परमहंस ने नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द) को एकांत में बुलाकर कहा :

"देखो, अति कठोर तपस्या के प्रभाव से मुझे कितने ही समय से अणिमा आदि सिद्धियाँ प्राप्त हो चुकी हैं, पर मेरे जैसे मनुष्य को, जिसे पहने हुए वस्त्रों का भी ध्यान नहीं रहता, इन सिद्धियों का उपयोग करने का अवसर ही कहाँ मिल सकता है ? अतः मैं चाहता हूँ कि माँ (काली देवी) से पूछ कर इन सबको तुम्हें सौंप दूँ क्योंकि मुझे दिखायी पड़ रहा है कि आगे चलकर तुझे माँ का बहुत काम करना है। इन सब शक्तियों का तेरे भीतर संचार हो जाय तो समय पड़ने पर इनका उपयोग हो सकता है। बोलो, तुम्हारा क्या विचार है ?"

नरेन्द्र को अब तक के अनुभवों से परमहंसजी की दिव्य शक्तियों पर पूरा विश्वास हो चुका था। उन्होंने कुछ देर विचार करके पूछा :

"महाराज ! इन सब सिद्धियों से मुझे ईश्वर-प्राप्ति में सहायता मिल सकेगी ?"

ईश्वर-प्राप्ति में सहायता प्राप्त नहीं हो सकेगी परंतु ईश्वर-प्राप्ति के पश्चात् जब कार्य करने में प्रवृत्त होगे तो ये सब बहुत उपयोगी होंगी।"

"महाराज ! इन सब सिद्धियों की मुझे क्या आवश्यकता है ? पहले ईश्वर-दर्शन हो जायें, फिर देखा जायेगा कि इन सिद्धियों की मुझे क्या आवश्यकता है ? अत्यंत चमत्कारिक विभूतियों और सिद्धियों को अभी से लेकर अगर ईश्वर-प्राप्ति के ध्येय को भुला दिया जाय एवं स्वार्थ से प्रेरित होकर इनका अनुचित प्रयोग किया जाय तो बड़ी हानिकारक होंगी।"

इस उत्तर को सुनकर परमहंसजी बहुत प्रसन्न व संतुष्ट हुए। उन्होंने परख लिया कि नरेन्द्र वास्तव में त्याग-भावनावाला है और सेवामार्ग में बहुत अधिक प्रगति कर सकेगा।

जिसके जीवन में त्यागरूपी सद्गुण होता है उसे सहज ही लक्ष्यप्राप्ति हो जाती है, सफलताएँ उसके चरण चूमती हैं।

कुण्डलिनी की योगाग्नि

उच्चस्तरीय योग-साधनाओं में कुंडलिनी महाशक्ति के जागरण की विशेष चर्चा की जाती हैं। कुंडलिली मूलाधार एवं सहस्राधार दो केन्द्रों की अधिष्ठात्री हैं। मूलाधार भौतिक सामर्थ्य का और सहस्रधार आत्मिक विभूतियों का उद्गम केन्द्र है। एक को आत्मा का, दूसरे को परमात्मा का प्रतीक-प्रतिनिधि कह सकते हैं। एक भूलोक है तो दूसरा स्वर्गलोक। मूलाधार से सहस्रधार तक पहुँचाने का मार्ग मेरुदंड स्थित सुषुम्ना हैं। उसी को अध्यात्म भाषा में ध्रुवकेन्द्र कहा गया है। इन्हें परस्पर जोड़ने वाली शक्ति का नाम ही कुंडलिनी है, जो साढ़े तीन फेरे लिए महासर्पिणी के रूप में मेरुदंड-क्षेत्र में परिभ्रमणशील है। मूलाधार से सहस्रधारचक्र तक ही इसकी यात्रा कामबीज से ब्रह्मबीज की ओर महायात्रा कहलाती है, जिस पथ पर चलते हुए योगी जन अपने परम लक्ष्य तक पहुँचते और नर से नारायण बनते हैं।

वस्तुतः कुंडलिनी एक विशेष प्रकार की योगाग्नि है, जो जाग्रत होने पर व्यक्ति के अंतःक्षेत्र को सुविकसित करती है और उसे भौतिक संपदाओं एवं आत्मिक विभूतियों से भर देती है। विश्व-ब्रह्मांड एवं मानवी चेतना के सभी आयामों की जानकारी व उनका सदुपयोग, इसी को विकसित करने पर उपलब्ध कर सकना संभव होता है। प्रायः लोग प्राणशक्ति को ही कुंडलिनी मान बैठते हैं, परंतु गहराई से पर्यवेक्षण करने पर इनमें कुछ भिन्नता स्पष्ट नजर आने लगती है। प्राणशक्ति वस्तुतः एक प्रकार की शारीरिक ऊर्जा है। विद्युत, प्रकाश और ऊष्मा की भाँति यह भी शरीर में कार्यरत रहती है - योगाग्नि का प्रज्वलन, प्रस्फुटन एवं दैवी अनुग्रह का प्रत्यक्षीकरण। दैवी क्षमता की इस अमृतवर्षा से रासायनिक तत्त्वों का समुच्चय मानवीसत्ता को एक नया स्वरूप प्रदान करता है, जिसके फलस्वरूप व्यक्ति का आत्मपरिष्कार तो होता ही है, साथ ही उसकी क्रियाशीलता में भी असाधारण रूप से अभिवृद्धि होती है। थियोसोफी के मूर्धन्य तत्त्ववेत्ता सी.डब्ल्यू. लेडबीटर ने अपनी सुप्रसिद्ध कृति 'दि चक्राज' में कुंडलिनी महाशक्ति की व्याख्या करते हुए बताया है कि यह न केवल उच्चस्तरीय रसायनों का समुच्चय करती है, वरन रेडियम जैसे चमकीलें तत्त्वों की तरह मनुष्य की जीवनशक्ति - केंद्रों-चक्रों को भी प्रकाशित एवं अनुप्राणित करने की पूरी भूमिका निभाती है। इन्हीं अनुदान केंद्रों के अंतराल में दिव्य संपदाएँ भरी पड़ी हैं, जिन्हें जाग्रत एवं विकसित कर लेने पर क्षुद्रता का महानता में, मनुजता का देवत्व में रूपांतरित घटित होता है।

योगविद्या विशारदों के अनुसार कुंडलिनी जागरण मूलतः अंतस्थ चेतन-ऊर्जा का जागरण है, इसलिए इस ऊर्जा को किन्हीं भौतिक प्रतीकों से एकात्म समझने की भूल नहीं करनी चाहिए। जो लोग कुडलिनी को नाड़ीजाल की स्फुरणा विशेष मान बैठे हैं, वे नाद-साधना एवं बिंदु-साधना से कुंडलिनी-साधना का संबंध समझ नहीं पाते; जबकि चेतना मूलरूप में एक है तथा पिंड में वह दिव्य प्रकाश एवं अनाहत नाद के रूप में भी अभिव्यक्त होती है और तज्जन्य आनंद-उल्लास की दिव्य संवेदनाओं के रूप में भी। इन अभिव्यक्तियों में आपसी विरोध या भेद नहीं, वरन मूल एकात्मकता है, यह तथ्य हृदयंगम कर लेना हर साधक के लिए आवश्यक है। कुंडलिनी के विभिन्न स्वरूप समझने के लिए यहाँ दिए जा रहे कुछ महत्त्वपूर्ण शास्त्रीय वचनों को समझ लेना उपयोगी होगा। षट्चक्र निरूपण में कहा गया है -

कूंजती कुलकुंडली च मधुरं ....॥

अर्थात् कुडंलिनी मधुर कुंजन करती है। श्वास-प्रश्वास का प्रवर्तन करती हुई वह संसार के जीवों को प्राणधारण करती है तथा मूलाधार पद्मगह्वर में विलास करती है। घेरंड संहिता में भी कहा गया है -

मूलाधारे कुंडलिनी भुजंगाकाररूपिणी ।
जीवात्मातिष्ठति तत्र प्रदीप कालिकाकृतिः॥

अर्थात् मूलाधार में सर्पाकृति कुंडलिनीशक्ति के रूप में जीवात्मा हैं, जो दीपक की लौ की तरह दीप्तिमान है।

शक्ति तंत्र में कुंडलिनी महाशक्ति को सृष्टि-संचालन कर्त्री कहा गया है। उसके अनुसार -

शक्तिकुंडलिनेति विश्व जनन व्यापार व्रतोद्यमा।

अर्थात् यह सारा जगत-व्यापार कुंडलिनी महाशक्ति के ही प्रयत्न से चल रहा है।

महायोग विज्ञान भी कहता है - **विद्युल्लता पराजाता पंचानां मातृ रूपिणी .... पराचेत्तया ज्ञानक्रिया कुंडलिनीति च॥**

अर्थात् विद्युत की सी चमक वाली पंचतत्त्वों, पंचप्राणियों की माता, परम चेतना ज्ञानशक्ति एवं क्रियाशक्ति कुंडलिनी है। शिवसंहिता सर्पिणी-सी कुंडलिनी को ही स्फुरणा, गति एरां वाक् के रूप में प्रतिष्ठित करते हुए कहती है कि वह स्वयं अपनी ही प्रभा में प्रतिष्ठित है।

महायोग विज्ञान कहता है - **इच्छा-ज्ञान क्रियात्मासौ तेजोरूपा .... वर्णमालिकाम्।**

अर्थात् मूलाधार में ब्रह्मशक्ति कुंडलिनी ही जीवनशक्ति एवं आत्मतेजोमय के रूप में विद्यमान है। वही प्राणाकाश को ज्योतित रखती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि कुंडलिनीशक्ति यर्थाथतः आत्मतेज एवं जीवनीशक्ति है। स्नायुतंत्र की नाड़ीजाल की क्रियात्मक द्रव्य-ऊर्जा मात्र वह नहीं है। अतः उस चेतन-ऊर्जा की अभिव्यक्ति अनाहत नाद, दिव्य ज्योति, जीवन अग्नि, प्राण ऊर्जा, उल्लास चेतना, आनंद चेतना आदि रूपों में हुई है। वह पिंड में प्रतिष्ठित ब्रह्मज्योति की संज्ञा एवं अनुभूति है। वह आद्यशक्ति है। इसलिए कुंडलिनी जागरण में प्राण-साधना, नाद-साधना एवं ज्योति-साधना एकीभूत है। मुख्य प्राण-प्रवाह अपने निम्नस्थ केंद्र 'मूलाधार' में साढ़े तीन लपेटों का चक्कर लगा कर पुनः ऊपर लौटता है तथा दूसरे ध्रुव सहस्त्रधार में पहुँचता है। इसीलिए उसे कुंडलिनी नाम दिया गया है। सर्पेन्टाइन पावर या 'क्वाइल्ड सर्पेन्ट' वही है, स्थितिक-ऊर्जा, गतिज-ऊर्जा एवं अवशिष्ट-ऊर्जा के समन्वित क्रिया-कलापों की सूत्र-संचालिका वही एक है। इसीलिए उसे 'स्पिरिट फायर' एवं 'लाइफ फायर' कहा गया है। 'ह्यूमन मैग्नेटिज्म' अर्थात् मानवीय विद्युत चुंबकीयशक्ति, प्रोटोप्लाज्म या एक्टोप्लाज्म अर्थात् जीवशक्ति या जीवन रस, कॉस्मिक एनर्जी अर्थात् ब्रह्माण्डीय चेतना आदि भिन्न-भिन्न रूपों में उसकी व्याख्या के प्रयास किए जाते रहे हैं, किंतु ये सभी रूप उसी एक आद्यशक्ति की स्फुरणा एवं अभिव्यक्तियाँ हैं, प्रतिक्रियाएँ हैं। मूलशक्ति किसी आकृति विशेष या क्रिया विशेष से बंधी नहीं है। वह समस्त संवेदनों की कारणभूत है। वे संवेदन ज्योति के रूप में भी अनुभूत होते हैं, नाद के रूप में भी, प्राणाग्नि के रूप में भी तथा अन्य दिव्य अनुभूतियों के रूप में भी।

इस दृष्टि से कुंडलिनी साधना मूलतः ध्यान-धारणा ही है। वह ज्योतिर्मयी योग-धारणा, सूक्ष्मतम नाद-साधना का समन्वित रूप है। वह प्रज्ञा-साधना है। सुषुम्ना-प्रवाह में ऊर्ध्वगामी कुंडलिनी संवेदना जैसे-जैसे आगे बढ़ती जाती है, वह चित्त के संस्कार-मलों को प्रक्षालित करती जाती है और उसी क्रम में निर्मल चेतना में ऋतंभरा प्रज्ञा का प्रकाश प्रदीप्त होता जाता है। मन-बुद्धि की क्षमता एवं पवित्रता- प्रखरता बढ़ती जाती है और अंततः वह अद्वैत की स्थिति आती है। जहाँ साधक और सविता, सर्पिणी और महासर्प, शिव एवं अद्वैत स्थापित हो जाता है। कुंडलिनी योगाग्नि के प्रज्वलन की परिणति

अछूत

सवर्णो के दबाव के कारण अछूत वर्ग के व्यक्तियों को मुसलमान बनाने में यवनों को मदद मिलती थी। संत रविदास एक ओर अपने लोगों को समझाते और कहते - "तुम सब हिंदू जाति के अभिन्न अंग हो, तुम्हे दलित जीवन जीने की अपेक्षा मानवीय अधिकारों के लिए संघर्ष करना चाहिए एवं दूसरी ओर वे कुलीनों से भी टक्कर लेते। कहते वर्ण विभाजन का संबंध मात्र सामाजिक व्यवस्था से है।" उनकी इस अटूट निष्ठा का ही फल था कि रामानंद जैसे महान सवर्ण संत एक दिन स्वयं ही उनकी कुटिया में पधारे। गुरु स्वयं सत्पात्र को खोजता आ गया। रविदास को दीक्षा देकर उनके आदर्शों की प्रामाणिकता को खरा सिद्ध कर दिया।

'जय हिन्द'

सर्वप्रथम नमन है उन शहीदों को, क्रान्तिकारियों को, देश के महान सपूतों को, जिनके त्याग और बलिदान के कारण ही हम स्वतंत्र भारत में आजादी से रह रहे हैं।

राष्ट्रीय पर्व हो या किसी नेता का भाषण, हम सभी बड़े जोश के साथ 'जय हिन्द' का नारा लगाते है। यह सभी जानते है कि 'जय हिन्द' का नारा नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने दिया था। नेताजी ने यह नारा क्यों और कैसे दिया, इसके बारे में मैं आपको बताना चाहता हूँ। 'जय हिन्द' एक नारा ही नहीं है बल्कि इस नारे में आजाद हिन्द फौज के एक सिपाही की वीरता, त्याग व बलिदान की कहानी छिपी है।

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस अंग्रेजों से छिप कर बचते हुए बर्मा पहुँचे, वहाँ आजाद हिन्द फौज की स्थापना की, जो भारत की आजादी के लिए लड़ते हुए भारत में अंग्रेजी सेना का मुकाबला कर रही थी। आजाद हिन्द सेना ने अंग्रेजी सेना से माँडले शहर ले लिया था।

आजाद हिन्द फौज के दो सिपाही बंगाल की सीमा में अंग्रजी सेना की गतिविधियाँ जानने के लिए गये। बहुत अधिक वर्षा होने के कारण वहां बहुत घने जंगल है। समुद्र तट नजदीक होने के कारण केले के बड़े-बड़े वृक्ष पाये जाते हैं। ये सैनिक केले के पेड़ों के तनों को खोखला कर लेते थे, अंग्रजी सेना के आने पर उनमें छिप जाते थे।

अधिक वर्षा के कारण बंगाल के सुन्दर वन में जहरीले कीड़े, मच्छर व चीटियाँ पाई जाती है। ये चीटियाँ यदि किसी के पैर में चढ़जायें, चीटियाँ हटाने से पहले चार गुनी चीटियाँ और चढ़जाती हैं, चीटियों की गति इतनी तेज होती है कि थोड़ी देर में पूरा शरीर चीटियों से भर जाता है और आदमी हजारों चीटियों के काटने का दर्द सहते-सहते मर जाता है।

इन दो सैनिकों ने अंग्रेजी सेना के कुछ सिपाहियों को आते देखा तो एक सैनिक भाग कर पेड़ पर चढ़गया और दूसरा सैनिक केले के तने में छिप गया। अंग्रेज सेना के जाने के बाद एक सैनिक पेड़ से कूद कर आ गया तथा दूसरा सैनिक केले के तने से बाहर निकला। इस सैनिक ने अंग्रेजी सेना की गतिविधियों के बारे में रिपोर्ट भी तैयार कर रखी थी जब वह सैनिक केले के पेड़ के तने से बाहर आया तो उसके पैर पर चीटियाँ चढ़चुकी थी। उसने दूसरे सैनिक से कहा वह शीघ्र माँडले जा कर नेताजी को रिपोर्ट दे दे ताकि समय पर कार्यवाही हो सके। दूसरा सैनिक बड़े दुःख से अपने साथी की दशा देख रहा था। उसकी आँखों में आँसू थे। इतनी देर में पहले सैनिक के पेट पर चीटियाँ चढ़चुकी थी, वह लेट गया, करोड़ों चीटियों के काटने का दर्द सह कर भी बड़े साहस से अपने साथी को शीघ्र जाने को कहा, पर दूसरा सैनिक अपने साथी को छोड़ कर जाने को तैयार नही था। इतनी देर में पहले सैनिक के गले तक चीटियाँ आ चुकी थी। मुँह को छोड़कर सारा शरीर चीटियों से भर गया था। असीम पीड़ा सहते हुए उसने बड़ी कठिनाई से कराहते हुए कहा "तुम्हें नेताजी की कसम है, शीघ्र जाओ, यह रिपोर्ट नेताजी को जाकर दो।" तब तक मुँह पर भी चीटियाँ आने लगी थीं, उसने बड़ी कठिनाई से पूरा दम लगाते हुए कहा "नेताजी से मेरा जय हिन्द कहना।" और तब तक चीटियाँ उसके मुँह पर भी फैल चुकी थी। दूसरा सैनिक शीघ्रता से चल पड़ा। जब वह माँडले पहुँचा तो नेताजी एक जन सभा को संबोधित कर रहे थे, उस सैनिक ने नेताजी को बुलाया और उस सैनिक के त्याग और बलिदान के बारे में बताया। नेताजी उस वीर सिपाही के बलिदान व साहस की करुण कथा सुन कर रो पड़े और मंच पर जाकर कहा, "आज से हमारा नारा होगा "यह हिन्द"।"

इस प्रकार "जय हिन्द" का नारा गूँज उठा। 'जय हिन्द' केवल नारा ही नहीं है उसे वीर सिपाही के साहस, त्याग व बलिदान की गूँज, जय हिन्द के नारे में सुनाई दे रहा है जो हर राष्ट्रीय पर्व पर हमें याद दिलाता है -

शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले,
वतन पे मरने वालों का यही नामो निशाँ होगा।

संस्था समाचार

(गंजबासौदा)

नवरात्रि में वेदांत आश्रम में हुई देवी आराधना नौ दिनों तक सजा मां भगवती का दरबार

शारदीय नवरात्र के पावन पर्व पर वेदांत आश्रम पर मां भगवती की सुंदर और आकर्षक झांकी सजाई गई। नवरात्रि के प्रथम दिवस माता की प्रतिमा वेदों की ध्वनि के बीच एवं जयकारों के बीच स्थापना की गई, विद्युत लाइटों की विशेष व्यवस्था की गई, शाम होते ही भक्तों का तांता देवी के दिव्य दर्शन हेतु लग जाता था, नौ दिनों तक बड़े विधि विधान से मां भगवती की पूजा अर्चना की गई । विद्यालय के संस्कृत के छात्रों ने भी रोज शाम को भगवती के चरणों में भजन समर्पित किए। नवरात्रि में आश्रम का समूचा वातावरण देवी की भक्ति में रम गया। नौ दिनों के पश्चात् दशमी के दिन भंडारे का आयोजन किया गया। जिसमें कन्याओं एवं भक्तों ने प्रसादी ग्रहण की उसके पश्चात् जब माता के विसर्जन का समय आया तो सुन्दर रथ को तैयार किया गया, रथ के पीछे संस्कृत विद्यार्थी भजन कीर्तन करते हुए चल रहे थे और सबनें भगवती वेत्रवती के तट पर मां भगवती को विदाई दी और मां के जयकारे से समूचे वातावरण को गुंजायमान कर दिया।

सिद्ध संत बाबा जगन्नाथदासजी महाराज का स्वप्न साकार हुआ

परम पूज्य सिद्ध संत स्वामी जगन्नाथ दास जी महाराज की इच्छा अनुरूप संस्कृत विद्यालय की स्थापना उनकी ही परम्परा के संवाहक और उनकी प्रत्यक्ष कृपा के धनी जगतगुरू अनंतानंद द्वाराचार्य स्वामी डॉ रामकमल दास वेदान्ती जी महाराज द्वारा 01 फरवरी 2014 में की गई।

मार्च 2013 में संस्कृत विद्यालय हेतु पूज्य स्वामी वेदांती जी महाराज द्वारा गंज बासौदा के पास लगभग 8 बीघा जमीन क्रय की गई। बाबा जगन्नाथदास संस्कृत विद्यालय एवं गौशाला की स्थापना के उपलक्ष्य में श्रीमद् भागवत कथा का आयोजन किया गया। जिसमें दिव्य संतों की चरण रज से वेदांत आश्रम की भूमि पावन हुई रामजन्मभूमि न्यास अध्यक्ष स्वामी नृत्यगोपालदासजी महाराज, चार सम्प्रदाय के महंत श्री फूलदोलबिहारीदास जी जैसी दिव्य विभूतियों का सानिध्य एवं आशीर्वाद गंज बासौदावासियों को प्राप्त हुआ। कथा में ही 11 विद्यार्थियों को संस्कृत विद्यालय में प्रवेश दिया गया। उसके बाद शुरू हुआ संस्था की प्रगति का कार्य लगभग 18 दानदाताओं ने 6 कमरों के निर्माण हेतु राशि प्रदान की गई जिमसें 3 गौशाला शेड हेतु भी 5 दानदाताओं ने दानराशि प्रदान की। कथा में उमड़ी लाखों की भीड़ अपने आप में अद्वितीय कीर्तिमान स्थापित कर रही थी।

जिन धर्मप्रेमी बंधुओं ने वेदांत आश्रम के विद्यार्थियों के कक्ष निर्माण हेतु निम्न राशि प्रदान की गई - अब वो क्षण आया जिसका स्वप्न पूज्य बाबा जगन्नाथजी महाराज ने देखा था। जगन्नाथ जी महाराज ने देखा था दिसम्बर 2014 को संस्कृत विद्यालय एवं गौशाला के उद्घाटन अवसर पर 15 दिवसीय श्रीराम कथा का आयोजन वंदांत आश्रम की भीड़ ने परम पूज्य स्वामी वेदांती जी महाराज के श्रीमुख से रामकथा का श्रवण किया। कथा के विश्राम दिवस पर संत जगन्नाथदास संस्कृत पाठशाला एवं गौशाला का उद्घाटन मध्यप्रदेश विधानसभा के अध्यक्ष डॉ. सीताशरणजी शर्मा द्वारा किया गया और श्रीमज्जगतगुरु रामानंदाचार्य स्वामी हंसदेवाचर्यजी महाराज द्वारा स्वामी वेदांती जी महाराज को वेदांत आश्रम के महंत की गद्दी पर अवशिष्ट किया गया।

संस्था का निर्माण कार्य अभी भी गतिपूर्वक चल रहा है। परम पूज्य गुरुदेव स्वामी वेदांतीजी महाराज के समर्पण एवं संघर्ष का प्रतीक बना संस्कृत विद्यालय कम समय में ही अपनी पहचान क्षेत्र ही नहीं धीरे-धीरे पूरे विश्व में बनाता जा रहा है कई विदेशी नागरिक भी अमेरिका, कनाडा, न्यूजीलैंड इत्सादि देशों से वेदांत आश्रम, गंज बासौदा आकर संस्था की गतिविधियों की जानकारी समय-समय पर लेते हैं।

परम पूज्य स्वामी वेदांती जी संस्कृत भाषा एवं संस्कृति की रक्षा हेतु कटिबद्ध है इसलिए वेदांत आश्रम में स्थित बाबा जगन्नाथदास संस्कृत पाठशाला में निःशुल्क शिक्षा के साथ भोजन, आवास, चिकित्सा सुविधा संस्था श्री रामानंद विश्व हितकारिणी परिषद् द्वारा प्रदान की जाती है।
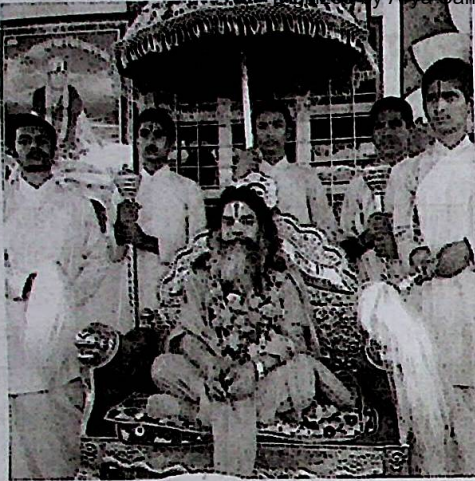
हिंसात्मक घटनाओं से नहीं होता कभी सुधार

गंजबासोदा, महाराज श्री ने प्रेस वार्ता में कहा

कि देश में हिंसात्मक घटनाओं से हम कभी सुधार होने कोई कल्पना नहीं कर सकते और न ही ऐसी घटनाओं से कोई सुधार हो पाया। उन्होंने आगे कहा कि गलतियां सभी से होती हैं संतों से भी गलती होती है। लेकिन गलती को स्वीकार करना चाहिए और दोषियों को सजा मिलनी चाहिए। ऐसे पाखंडी संतों के कारण सनातन धर्म में हिन्दु संस्कृति बदनाम हुई है। ऐसे घिनौने कांडों से अच्छे साधु-संतों, तपस्वियों को भी शर्मसार होना पड़ रहा है। इस मौके पर वेदांत आश्रम में अध्ययनरत संस्कृत विद्यालय के बच्चों ने वेद मंत्र की जोरदार ढंग से प्रस्तुति कर सभी का मन मोह लिया। 19 नवम्बर से 27 नवम्बर तक नौ दिवस तक रामकथा का भव्य आयोजन वेदांत आश्रम में किया जायेगा। इस विशाल रामकथा के आयोजक दिल्ली के शिवकुमार अनीता कंसल ने गंजबासौदा नगरी को तीर्थ मानकर संकल्प लिया है।

परमेश्वर का दान अनमोल

शमीन नाम का एक मनुष्य समरिया नगर में रहता था। जो जादू-टोना करके सामरिया नगर के लोगों को चकित करता था। अपने आपको वह एक महान पुरुष बताता था। सब लोग उसका बड़ा आदर करते थे। लोग उसके विषय में कहते थे, 'यह मनुष्य परमेश्वर की वह शक्ति है, जो महान कहलाती है।' उन दिनों फिलिप्युस सामरिया नगर में आया और प्रभु यीशु मसीह का प्रचार करने लगा। वह पवित्र आत्मा (परमेश्वर की आत्मा) की सामर्थ से लोगों को बीमारियों से चंगा करता और दुष्ट आत्माओं को निकालता। उसके द्वारा बहुत से आश्चर्य कर्म हुए, जिनके कारण लोगों को बहुत आनन्द आ गया।

शमीन ने भी विश्वास किया और फिलिप्पुस से बपतिस्मा लिया । पतरस और यहून्ना जो प्रभु यीशु मसीह के चेले थे, वे भी सामरिया नगर में आए। उन चेलों ने जब विश्वासी लोगों के लिए प्रार्थना की और उन लोगों पर हाथ रखा, तब उन्होंने पवित्र आत्मा (परमेश्वर की आत्मा) पाया। जब जादूगर शमीन ने देखा कि चेलों के हाथ रखने से लोगों ने पवित्र आत्मा पाया, उसके मन में लालच आया। उसने सोचा कि वह पवित्र आत्मा को खरीद सकता है, इसलिए उसने रुपये लाकर चेलों से कहा, 'वह अधिकार मुझे भी दो कि जिस किसी पर भी हाथ रखूं वह पवित्र आत्मा पाए।' पतरस ने शमीन जादूगर को जवाब दिया, 'तेरे रुपये तेरे साथ नष्ट हों, क्योंकि तूने परमेश्वर को दान रुपयों से मोल लेने का विचार किया।

इस बात में न तो तेरा हिस्सा है, न भाग, क्योंकि तेरा मन परमेश्वर के आगे सीधा नहीं। इसलिए अपनी इस बुराई से मन फिरा कर, संभव है तेरे मन का विचार क्षमा किया जाए।' क्योंकि प्रभु यीशु ने कहा,'जो कोई मनुष्य के पुत्र (यीशु) के विरोध में कोई बात कहेगा, उसका यह अपराध क्षमा किया जाएगा, परंतु जो कोई पवित्र आत्मा के विरोध में कुछ कहेगा, उसका अपराध न तो इस लोक में और न परलोक में क्षमा किया जाएगा।'

इस पर शमीन ने पतरस से कहा, 'तुम मेरे लि परमेश्वर से प्रार्थना करो कि जो बातें तुमने कहीं उसमें से कोई मुझ पर न आ पड़े।

पवित्र आत्मा पाने के विषय में पतरस ने कहा प्रेतियों के कम 'मन फिराओं और अपने - अपने पापों से क्षमा के लिए यीशु मसीह के नाम से बपतिस्मा ले, तो तुम पवित्र आत्मा का दान पाओगे।'

संस्था समाचार
(वाराणसी)

रुद्राभिषेक

श्री राम मंदिर में श्रावण माह में नित्य आश्रम के 11 ब्राह्मण बटुकों द्वारा नित्य रुद्राभिषेक किया गया। भाद्रपद मास में शुक्ल पक्ष चतुर्थी तिथि से अनन्त चतुर्थी पर्यन्त 10 दिवसीय श्री गणेश महोत्सव आश्रम में उत्साहपूर्वक मनाया गया, तथा आश्रम के बटुक छात्रों ने मिलकर भगवान विघ्नविनाशक श्री गणेशजी की मिट्टी की प्रतिमा निर्माण कर षोडशोपचार द्वारा भगवान को स्थापित किया।

अनंत चतुर्दशी

रामनगर की अतिप्राचीन रामलीला आज के दिन प्रारम्भ होकर पूरे माह तक अनवरत चलती है। इस रामलीला की अपनी विशेषता है। इसके सभी प्रसंगों के अलग-अलग स्थान अपने प्राकृतिक स्वरूप में आज भी विद्यमान है। काशी के राजा सैकड़ों वर्षो से पूरी रामलीला में उपस्थित रहते हैं।

श्री राम मंदिर में अनन्त चतुर्दशी के अवसर पर पारम्परिक व्यवस्थानुसार भाद्र शुक्ल चतुर्दशी के पावन पर्व पर पाण्डवों द्वारा श्रीकृष्ण से उनके पूजन की कथा विधि पूछने पर अपने अनन्त स्वरूप की चर्चा कर पूजन करने का आग्रह किया। मंदिर के विद्यार्थी श्री कृष्णकान्त खम्परिया ने अभ्यागत माताओं, भक्तों और विद्यार्थियों को कथा सुनाकर सबको अनन्त धागे बाँधकर प्रसाद वितरित कर भगवान कृष्ण का संदेश जीवन में उतारने का आग्रह किया।

शिक्षक दिवस

5 सितम्बर भारत के द्वितीय राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधाकृष्णनन् का जन्मदिन शिक्षक दिवस के रूप में मनाया जाता है। श्रीराम मंदिर में डा. नीरज त्रिपाठी, सुनील पाण्डेय, मणिप्रकाश पाण्डेय, श्यामबिहारी शर्मा, श्री महेन्द्र नारायण सिंह जी को इस अवसर पर सम्मानित किया गया।

पितृपक्ष

हिन्दू समाज में पुर्खों (पूर्वजो) के पूजन का पूरा एक पखवारा इसी निमित्त निर्धारित किया गया है। मोक्षदायिनी नगरी काशी में प्रत्येक हिन्दू अपने पूर्वजों के गन्तव्य तिथि पर मुंडन स्नान तर्पण दान और पूजन करके उनसे अपने सुखी जीवन की याचना करता है। पूर्वजों की भटकती हुई आत्मायें इससे शान्त होकर अपनी सन्तानों के सुखी जीन हेतु आशीर्वाद देते हैं।

जीवित्पुत्रिका व्रत

जीवित्पुत्रिका व्रत प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी मातायें अखण्ड व्रत रखकर विधि विधानपूर्वक पूजन और कथा श्रवण करती है। पुत्र-पुत्रियों के सुखी जीवन की कामना हेतु रखा जाने वाला यह व्रत माताओं का कठिन साधना का प्रमाण है। श्रीराम मंदिर में पुजारी जी को ओर से कथा श्रवण का समुचित व्यवस्था की गई।

विश्वकर्मा पूजा

सृष्टिकर्ता ब्रह्मा जी की अनुकम्पा से भगवान विश्वकर्मा को सृष्टि के निर्माण का दायित्व सौपा गया था। मानव जाति के उत्थान पतन और कर्मजीवी स्वरूप आराध्य देवता के रूप में भगवान विश्वकर्मा का पूजन सर्वत्र होने लगा है। मंदिरों, कल-कारखानों को उद्योगों आदि सभी स्थानों पर अत्यन्त आकर्षक साज-सज्जा के साथ विश्वकर्मा का पूजन सम्पन्न होता है।

हर वर्ष यह 17 सितम्बर को मनाया जाता है। मंदिर परिसर में श्री राघवेन्द्र दूबे तथा गोविन्द तिवारी एवं पुष्पेन्द्र द्वारा कथा सुनाई गई।

नवरात्रि पूजन एवं दुर्गोत्सव

हमारे आध्यात्मिक जीवन में शारदीय नवरात्र का शक्ति पूजन के रूप में मनाया जाता है। सारा देश दुर्गोत्सव (शक्ति आराधना) के लिए झूम उठता है। भारत में बंगाल की दुर्गा पूजा सम्पूर्ण विश्व में एक अनूठे महोत्सव के रूप में मनाया जाता है। काशी में भी सैकड़ों स्थानों पर माँ दुर्गा की प्रतिमा स्थापित कर पूरा महानगर विशाल दुर्गा मेला के रूप में सजा-संवरा रहता है। श्री राम मंदिर काश्मीरीगंज

खोजवां में परम्परानुसार नवरात्रि पूजन महोत्सव का आयोजन विधि विधानपूर्वक समायोजित किया गया। नव दिवसीय नवरात्र का पावन अवसर श्रीमद्वाल्मीकि रामायण तथा श्रीरामचरितमानस के अखण्ड पाठ का आयोजन कलश स्थापना के साथ प्रथम दिवस से प्रारम्भ होकर नवमी तिथि का पूर्णाहुति यज्ञ और प्रसाद वितरण के साथ सम्पन्न हुआ। अनंतानंद द्वाराचार्य जगद् गुरु श्री स्वामी जी के कृपा पात्र शिष्य श्री सर्वेश्वरदासजी द्वारा नित्य कथा का वाचन किया। नवमी को समापन के अवसर पर माताओं और बहनों ने भाग लिया।

दशहरे के अवसर पर श्रीरामानन्द विश्वहितकारिणी परिषद् की ओर से विजय दिवस और शस्त्रपूजन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

महाराज जी के आगामी कार्यक्रम

1. वेदान्त आश्रम गंजवासोदा, जिला विदिशा में 19 नवम्बर से 27 नवम्बर तक श्रीराम कथा।
2. बरखेड़ा हसन, जिला सिहोर, म0प्र0 में 30 नवम्बर से 8 दिसम्बर तक श्रीराम कथा।
3. 17 से 21 दिसम्बर 2017 बांद्रा बांध, होशंगाबाद, म.प्र. में श्रीराम कथा।
4. श्री राम मंदिर, काश्मीरीगंज, वाराणसी में 1 जनवरी 2018 आध्यात्मिक प्रवचन एवं पूज्य वेदान्ती जी महाराज का जन्म दिवस मनाया जायेगा।
5. गोण्डा म0प्र0 में 5 जनवरी से 13 जनवरी तक श्रीराम कथा ।
6. काजलखेड़ी जिला होशंगाबाद, म0 प्र0 में 5 फरवरी से 13 फरवरी 2018 तक प्रवचन एवं श्री लक्ष्मीनारायण महायज्ञ।
7. 4 मार्च से 11 मार्च 2018 को मसोई, चन्दौली में श्रीमद्भागवत कथा।

।। श्री कृष्ण की प्रातः स्तुति ।।

भये प्रकट कृपाला, परम दयाला यशुमति के हितकारी।
हर्षित महतारी, रूपनिहारी मोहन मदन मुरारी ।।
कंसासुर जाना मन अनुमान, पूतना बेगि पठाई ।
सो हर्षित घाई मन मुसकाई, गई जहाँ श्रीयदुराई ।।
तह जाईं उठाई, ह्वदय लगाई, पयधर मुख में दीन्हाँ ।
तब कृष्ण कन्हाई मनमुसकाई, प्राण तासु प्रभु हर लीन्हाँ ।।
जब इन्द्र रिसायो, मेघ बुलायो, बस कियो तिन्हीं मुरारी ।
गौअन हितकारी सुरमुनि झारी, नख पर गिरिधर धारी ।।
कंसासुर मारे, अति अहकारे, वत्सासुर संहारे ।
बक्कासुर आयो, बहुत डरायो, ताको बदन बिडारे ।।
अति दीनहिं जानी, प्रभु चक्रपानी, दियौ तिन्हि निज लोका।
ब्रह्मादिक आये, अति सुख पाये, मगन भये गये सोका ।।
यह छन्द अनुपा है रस रूपा, जो नर याको गावे ।
तेहि सम नहि कोई, त्रिभुवन माँई मन वांछित फल पावे ।।

दोहा - नन्द यशोदा तप कियो, मोहन सों मन लाय।
देखन चाहत बालसुख, रहे कछुक दिन छाय।।
जो नक्षत्र मोहन भय, सो नक्षत्र परो आय।
चारु बधाई रीति सब, करत यशोदा माय ।।

ग्राम मसोई में पूज्य महाराज जी प्रा. विद्यालय के बच्चों के साथ

पूज्य महाराज जी भक्तों को प्रसाद एवं आशीर्वाद देते हुए

नृत्य करती हुए बालाएं रिचा दास (14 वर्ष)
रक्षा दास (10 वर्ष), हैवर्ड (यू.एस.ए.)